V श्री महावीर जिनेन्द्राय नम: V

विशद भक्ति पीयूष

C

श्रीमद् जिनेन्द्र वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव

{XZm§H$ 24-25 \$adar, 2008

nmdZ gm{Prü`

प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति 108 आचार्य

श्री विशदसागरजी महाराज ससंघ

lr Am{XZmW {XJå~a O¡Z _§{Xa

Aå~m~mS>r, O`nwa (amO.) H$ Cnbú` _|

पद्यानुवादकर्ता :

आचार्य विशद सागर

कृति – **विशद भक्ति पीयूष**

कृतिकार – **प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज**

अवसर – Cnbú` _| : **श्रीमद् जिनेन्द्र वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव**
{XZm§H$ 24-25 \$adar, 2008
lr Am{XZmW {XJå~a O¡Z _§{Xa, Aå~m~mS>r, O`nwa

संस्करण – प्रथम– मार्च, 2008

प्रतियाँ – 1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज एवं
क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागरजी महाराज,

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी9829076085 , आस्था दीदी 9660996425, सपना दीदी9829127533

संयोजन – ब्र. सोनू, किरण, आरती दीदी

प्राप्ति स्थल –
1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा, 2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट, मनिहारों का रास्ता, जयपुर फोन : 0141-2319907 (घर), 3294018 (ऑ.), मो.: 9414812008
2. श्री 108 विशद सागर माध्यमिक विद्यालय बरौदिया कलाँ, जिला–सागर (म.प्र.) ● फोन : 07581-274244
3. विवेक जैन, 2529, मालपुरा हाऊस, मोतिसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर ● फोन : 2503253, मो.: 9414054624
4. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार, ए–107, बुध विहार, अलवर मो.: 9414016566

AW© gm¡OÝ` :

✲ श्री राजेन्द्रजी गोधा ✲ श्री विजयकुमारजी पाटनी ✲ श्री विनोद भारती जैन
✲ श्री टीकमचन्दजी सेठी ✲ श्री मदनलालजी ठोलिया ✲ श्री राकेशजी जैन

_wÐH$: **amOy J«m{\$H$ AmQ>© (gS>Xm emh),** जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

V श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः V

विशद भक्ति पीयूष

C

श्री मज्जिनेन्द्र लघु पञ्चकल्याणक
वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण महोत्सव
{XZm§H$ 16 Aà¡b, 2008 go 18 Aà¡b, 2008 VH$
nmdZ gm{ÞÜ`
प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति 108 आचार्य
श्री विशदसागरजी महाराज ससंघ
Am`moOH$: lr {XJå~a O¡Z g_mO
चित्रकूट कॉलोनी, एयरपोर्ट सर्किल, सांगानेर, जयपुर (राज.) के उपलक्ष्य में

पद्यानुवादकर्ता :
आचार्य विशद सागर

कृति – **विशद भक्ति पीयूष**

कृतिकार – **प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज**

अवसर – Cnbú` _| : **श्री मज्जिनेन्द्र लघु पञ्चकल्याणक वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण महोत्सव**
{XZm§H$ 16 Aà¡b, 2008 go 18 Aà¡b, 2008 VH$
श्री दिगम्बर जैन समाज, चित्रकूट कॉलोनी, एयरपोर्ट सर्किल, सांगानेर, जयपुर (राज.)

संस्करण – प्रथम– मार्च, 2008

प्रतियाँ – 1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज एवं
क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी महाराज, ब्र. लालजी भैया

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी, आस्था दीदी, सपना दीदी

संयोजन – ब्र. सोनू, किरण, आरती दीदी ● मो.: 9829127533

सम्पर्क सूत्र – 9829076085 (ज्योति दीदी)

प्राप्ति स्थल –
1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट, मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141–2319907 (घर), 3294018 (ऑ.), मो.: 9414812008
2. श्री 108 विशद सागर माध्यमिक विद्यालय
बरौदिया कलाँ, जिला–सागर (म.प्र.) ● फोन : 07581–274244
3. विवेक जैन, 2529, मालपुरा हाऊस, मोतिसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर ● फोन : 2503253, मो.: 9414054624
4. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार, ए–107, बुध विहार, अलवर
मो.: 9414016566

_wÐH$: **amOy J«m{\$H$ AmQ>© (g§Xrn emh),** जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

मेरी भावना

पाते नहीं सरलता जो जीव मन में। वह सारे भटकते रहते भव बीच वन मेंङ्क
मिलता नहीं उनको जब कोई सहारा, भक्ति का है सबको जग में इशाराङ्क

भारत एक धर्म प्रधान देश है एवं अनेक संत महात्माओं एवं विद्वानों की धर्म स्थली है। यहाँ अलौकिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए सदा ही भव्य जीवों के लिए द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव की अनुकूलता रही है। भव्यों के चित्त को धर्म की ओर आकर्षित करने के लिए **प.पू.** साहित्य रत्नाकर, **क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज** ने पूर्वाचार्यों की भक्ति के लिए इन शब्द पुष्पों को सरल एवं सुबोध भाषा में संचित किया है।

चिंतन के बिखरे पुष्पों को समेटकर चित्त को चैतन्यता की ओर ले जाने के लिए इन सरस शब्दों के माध्यम से निम्न भक्तियों का हिन्दी पद्यानुवाद किया है। अपने वैराग्यमयी परिणामों को तीव्र, विशुद्ध, निर्मल, पवित्र एवं पावन बनाने के लिए **विशद भक्ति पीयूष** का आलम्बन लें।

देवाः सुरेन्द्र नर नाग समर्चितेभ्यः। पाप-प्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्यःङ्क
घंटा-ध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो। नित्यं नमो जगति सर्व जिनालयेभ्यःङ्क

कहा गया है कि जिस प्रकार देवेन्द्र, असुरेन्द्र, चक्रवर्ती, धरणेन्द्र ने जिनकी सम्यक् प्रकार से भक्ति, आराधना की है। जो सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाले हैं। भव्य जीवों के मन को आकर्षित करते हैं जो घंटा ध्वजा, माला, धूपघट, अष्ट प्रातिहार्य आदि मंगल वस्तुओं से सुशोभित हैं। ऐसे त्रैलोक्य पूज्य प्रभु के चरणों में मेरा बारम्बार नमस्कार हो नमस्कार हो नमस्कार हो।

परम पूज्य gm{hË` aËZmH$a, क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज जिन्होंने विघ्नहरण पार्श्वनाथ, भक्तामर, पद्मप्रभु, चन्द्रप्रभु, nwînXÝV, dmgwnyÁ`, em§{VZmW, _w{Zgwd«V, Zo{_ZmW, _hmdra, nÄMa_oð>r, ZdJ«h em§{V, ZdXodVm, nÄM~mb`{V, VËdmW©gyÌ आदि लगभग 15 पूजन विधान के माध्यम से शब्द पुञ्जों को सरल भाषा में संचित किया है। ऐसे प. पू. वात्सल्यमयी, ज्ञानमूर्ति, आचार्य श्री के चरणों में मेरा शत् कोटि विनम्र नमन।

बा.ब्र.ज्योति दीदी
संघस्थ -आचार्य विशदसागरजी महाराज

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ	क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ
1	ईर्या पथ भक्ति	5	24	सरस्वती स्तोत्र	80
2	लघु सिद्ध भक्ति	10	25	सरस्वती नाम स्तोत्र	81
3	लघु श्रुत भक्ति	11	26	नवग्रह शांति स्तोत्र	82
4	लघु योगि भक्ति	12	27	चैत्यालयाष्टक	84
5	लघु आचार्य भक्ति	13	28	करुणाष्टक	86
6	गुरु भक्ति	14	29	अद्याष्टक	88
7	वृहद सिद्ध भक्ति	15	30	लघु स्वयंभू-स्तोत्र	90
8	वृहद चैत्य भक्ति	17	31	एकीभाव स्तोत्र	95
9	श्री श्रुत भक्ति	23	32	विषापहार स्तोत्र	100
10	वृहद चारित्र भक्ति	27	33	कल्याण मन्दिर स्तोत्र भाषा	108
11	वृहद योगि भक्ति	29	34	अकलंक स्तोत्र	116
12	वृहद आचार्य भक्ति	32	35	गणधर वलय स्तोत्र	119
13	श्री पञ्च गुरु भक्ति	36	36	आध्यात्म शयन गीतिका	121
14	श्री शांति भक्ति	38	37	गोमटेश स्तुति	123
15	श्री समाधि भक्ति	42	38	वीतराग स्तोत्र	125
16	श्री नंदीश्वर भक्ति	45	39	परमानंद स्तोत्र	126
17	श्री निर्वाण भक्ति	58	40	सोलहकारण भावना	128
18	दर्शन पाठ	65	41	सामायिक पाठ	134
19	पंच महागुरु भक्ति	66	42	श्री जिन स्तवन	139
20	सुप्रभात स्तोत्र	68	43	चौबीस तीर्थंकर स्तवन	145
21	नवदेवता स्तोत्र	71	44	अर्हन्त वंदना	149
22	महावीराष्टक स्तोत्र	73	45	पन्द्रह तिथियाँ क्या कहती हैं ?	157
23	भक्तामर स्तोत्र	75	46	श्रावक प्रतिक्रमण	160
			47	क्षमा वंदना	168

ईर्यापथ भक्ति

(नरेन्द्र छन्द)

अनुपम जिन मंदिर में आकर, हो निःसंग परिक्रमा तीन।
हाथ जोड़ मस्तक पे रखकर, नमन् करूँ भक्ति में लीनङ्क
बुद्धि युत पापों के हर्ता, पूज्यनीय इन्द्रों से देव।
ज्ञान सूर्य अविनाशी जिनकी, 'विशद' स्तुति करूँ सदैवङ्क 1ङ्क

परम पवित्र विशद शोभामय, भवि जीवों को मंगलरूप।
नित्य निरन्तर उत्सव संयुत, अद्वितीय हैं तीर्थ स्वरूपङ्क
मणिमय तीन लोक के भूषण, श्री जिनवर की शरण मिले।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय का, वन्दन कर मम् हृदय खिलेङ्क 2ङ्क

श्रीमत् स्याद्वाद है लक्षण, अतिशय जो गम्भीर अनन्त।
तीन लोक पर शासनकारी, जिन शासन होवे जयवन्तङ्क 3ङ्क

श्री मुख का अवलोकन करके, श्री मुख का दर्शन हो प्राप्त।
जिन दर्शन से रहित जीव को, वह सुख कैसे हो सम्प्राप्तङ्क 4ङ्क

वीतराग मय देव! आपके, चरण कमल को देखा आज।
नयन सफल द्वय हुए हमारे, इस जीवन का पाया राजङ्क
तीन लोक के तिलक जिनेश्वर, मुझको यह संसार समुद्र।
चुल्लू भर प्रतिभाषित होता, लगता है अब बिल्कुल क्षुद्रङ्क 5ङ्क

हे जिनेन्द्र ! तव दर्शन करके, हुई है मम् प्रच्छालित देह।
धर्म तीर्थ में न्हवन किया है, नेत्र विमल हो गये हैं येहङ्क6ङ्क

भव्य जीव रूपी कमलों को, महावीर जिन सूर्य समान।
प्राणी मात्र के हितकारी का, करते भाव सहित गुणगानङ्क
देवों द्वारा पूज्यनीय हैं, श्री जिनवर देवाधिदेव।
चर अरु अचर द्रव्य दर्शायक, तव चरणों में नमन सदैवङ्क 7ङ्क

दोष नष्ट हो गये हैं जिनके, देवों से अर्चित जिन देव।
गुण के सागर श्री जिनेन्द्र के, चरणों वन्दन करूँ सदैवङ्क
मोक्ष मार्ग के उपदेशक शुभ, जो हैं देवों के भी देव।
श्री जिनेन्द्र के चरण कमल में, विशद नमन् मैं करूँ सदैवङ्क 8ङ्क

हे देवाधिदेव सिद्ध श्री!, हे सर्वज्ञ! त्रिलोकी नाथ।
हे परमेश्वर ! वीतराग श्री, जिन तीर्थंकर के पद माथङ्क
हे जिन श्रेष्ठ महानुभाव कई, वर्धमान! स्वामिन् शुभ नाम।
तव चरणों की शरण प्राप्त हो, करते बारंबार प्रणामङ्क 9ङ्क

जिनने जीते हर्ष द्वेष मद, अरु जीता है ईर्ष्याभाव।
मोह परीषह को भी जीता, अन्तर में जागा समभावङ्क
जन्म मरण आदि रोगों को, जीत लिया है भव का अन्त।
ऐसे श्री जिनदेव हमारे, सदा-सदा होवें जयवन्तङ्क 1ङ्क

तीन लोकवर्ति जीवों के, हितकारक हैं आप महान्।
धर्म चक्ररूपी सूरज हैं, लाल चरण हैं आभावानङ्क
इन्द्र मुकुट में चूड़ामणि की, किरणों से अति शोभामान।
जयवन्तों श्री वर्धमान को, करते हैं जग का कल्याणङ्क 11ङ्क

तीन लोक के शिखामणि हे, भगवन्! आपकी जय-जय हो।
तिमिर विनाशक जग के रवि तुम, मोह तिमिर मम् दूर करोङ्क

अविनाशी शांति को भगवन्! हमको आप प्रदान करें।
रक्षक नहीं दूसरा कोई, एक आप कल्याण करें।। 12ङ्क

हे स्वामिन्! शुभ भक्ति आपकी, भाव सहित जो करे यथार्थ।
मुख से स्तुति करे आपकी, गुण गाता है जो निःस्वार्थङ्क
विनती करने हेतु आपकी, शीष धरे जो हस्त युगल।
धन्य है उसका यह नर जीवन, शीष झुकाएँ चरण कमलङ्क 13ङ्क

जो भव भ्रमण से बचना चाहो, चरण कमल की करना सेव।
यदि चरण न मिले कदाचित्, कुछ भी करना आप सदैवङ्क
पर कुदेव को नहीं पूजना, खाय अन्न भूखा नर-मौन।
अन्न यदि दुर्लभ हो जावे, कालकूट विष खाये कौन?ङ्क 14ङ्क

सहस नयन से इन्द्र देखता, निरुपाधिक सुन्दर तम देह।
गद्गद् वाणी रोमांचित हो, प्रभु से करे न कौन स्नेहङ्क
हर्ष अश्रु नयनों से झरते, शीष झुका द्वय जोड़े हाथ।
चित्त प्रफुल्लित होता भगवन्, खुश हो चरण झुकाएँ माथङ्क 15ङ्क

तीन लोक के रक्षक ज्ञाता, कर्म शत्रु के शासक नाथ।
श्री उत्पादक श्रेष्ठ सुरों में, त्रय विधि तव चरणों में माथङ्क
शरणागत कल्याण प्रदायक, मैं हूँ आपकी चरण शरण।
छोड़ उपेक्षा रक्षा कीजे, विशद प्रार्थना करो वरण।। 16ङ्क

तीन लोक के अधीपति शुभ, राजा महाराजा अरु देव।
कोटि मुकुट की शोभा पाकर, चरण कमल शोभित हैं एवङ्क
कर्मरूप वृक्षों को जिनने, विशद किया जड़ से निर्मूल।
चन्द्र समान सुशीतल जिनके, भक्ती करूँ चरण पद मूलङ्क 17ङ्क

मम् प्रमाद से ईर्यापथ में, हुआ यदि जीवों का घात।
हाथ पैर तन के घर्षण से, कहीं हुआ होवे आघातङ्क
इस प्रकार भय के कारण से, ईर्यापथ को छोड़ रहा।
जीव घात के दोषों का मैं, प्रायश्चित कर मुख मोड़ रहाङ्क 18ङ्क

ईर्यापथ से चलने में यदि, मम् प्रमाद हो कोई आज।
एकेन्द्रिय आदि जीवों का, दुखी हुआ हो पूर्ण समाजङ्क
चार हाथ भूमि को लखकर, नहीं किया हो यदि गमन।
मिथ्या पाप होय वह मेरा, गुरु भक्ति से होय शमनङ्क 19ङ्क

अञ्चलिका

ईर्यापथ में गुप्ति रहित हो, नाथ हुआ जीवों का घात।
प्रतिक्रमण करता चलने में फैल, सिकुड़ता रहा है गातङ्क
शीघ्रगमन निर्गमन ठहरने, हरित काय पर गमन किया।
कफ खकार मल मूत्र क्षेपकर, जीव बीज पर वमन कियाङ्क 1ङ्क

एकेन्द्रिय आदिक जीवों को, रोका फेंका रगड़ दिया।
एकमेक संतापित मूर्छित, खण्ड-खण्ड कर चूर्ण कियाङ्क
रुके हुए या चलने वाले, हुआ है जीवों का संताप।
प्रतिक्रमण उसकी शुद्धि के, हेतु करता पश्चात्तापङ्क 2ङ्क

जब तक मैं अरहंतों को अरु, भगवन्तों को करूँ नमन्।
पर्युपासना करता हूँ मैं, मेरे हों सब कर्म शमनङ्क
उतने काल तक अशुभ कार्य से, अपना मैं मुख मोड़ रहा।
शुभम् क्रियाओं को मैं अपनी, विशद भाव से छोड़ रहाङ्क 3ङ्क

U_mdH$ma_hm_§Ì

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

(कायोत्सर्ग करें)

दोहा– अनेकांत स्वरूप के, कर्ता श्री जिनराज।
शांत परम परमात्म को, नमन करूँ मैं आजङ्क4ङ्क

ईर्यापथ में हुए दोष की, आलोचन करता मैं नाथ।
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, विदिशाओं की इच्छा है साथङ्क
चार हाथ भूमि दृष्टि से, भव्य जीव चलते हैं देख।
मम् प्रमाद से शीघ्र गमन में, जीव हुए बाधित कई एकङ्क 5ङ्क

वनस्पतिकायिक पञ्चेन्द्रिय, एकेन्द्रिय चऊ विकलत्रय।
स्वयं किया उपघात कराया और किसी के भी आश्रयङ्क
हिंसा आदि करने वाले की, अनुमत की हो हे! नाथ!।
वह मेरे दुष्कृत मिथ्या हों, चरण झुकाते हैं हम माथङ्क 6ङ्क

पापी मायाचारी हूँ मैं, दुष्ट मन्द बुद्धी लोभी।
राग द्वेष युत मन मलीन कर, निर्मित किए पाप जो भीङ्क
तीन लोक के नाथ आपके, पाद मूल मे हों सब क्षय।
सतत् छोड़ता निन्दा पूर्वक, मेरा जीवन हो अक्षयङ्क 7ङ्क

चार घातिया कर्म जिन्होंने, नाश किए जड़ से निर्मूल
समीचीन मुक्ति पथ पाकर, निज स्वरूप पाए अनुकूलङ्क
दर्शन ज्ञान अनन्त वीर्य सुख, धारण करते हैं जिनदेव।
क्रिया कलाप प्रकट करता हूँ, चरणों नमन् करूँ मैं एवङ्क 8ङ्क

●●●

लघु सिद्ध भक्ति

(करते हम आचार्य वन्दना पूर्वाचार्यों के अनुसार)

ईर्यापथ भक्ति शुभ वंदन, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
सकल कर्म के क्षय हेतु हम, करते हैं गुरु बारंबारङ्क
भाव पुष्प से पूजा वंदन, स्तव सहित समर्पित अर्घ्य।
श्री सिद्धो की भक्ति संबंधी, करते हैं हम कायोत्सर्गङ्क

(9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

सिद्धों के हैं आठ मूलगुण, दर्श अनन्त वीर्य सुख ज्ञान।
अवगाहन सूक्ष्मत्व अगुरुलघु, अव्याबाध अनन्त प्रमाणङ्क
तप से नय संयम चारित्र से, सिद्ध हुए हैं दर्शन ज्ञान।
ऐसे सिद्ध प्रभु के चरणों, करते बारम्बार प्रणामङ्क

अञ्चलिका

सिद्ध भक्ति के कायोत्सर्ग में, हुई हो कोई हम से भूल।
हे भगवन! हम इच्छा करते, वह गल्ती होवे निर्मूलङ्क
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित मय, अष्ट कर्म से पूर्ण विमुक्त।
उर्ध्व लोक के शीर्ष विराजित, अष्ट गुणों से हैं संयुक्तङ्क

वर्तमान अरु भूत भविष्यत, तीन काल के जगत प्रसिद्ध।
तप से नय संयम चारित्र से, जो भी जीव हुए हैं सिद्ध।
नित्य अर्चना पूजा वंदन, नमन करें हो सुगति गमनङ्क
बोधि समाधी जिन गुण पाएँ, कर्म कष्ट का होय शमनङ्क

●●●

लघु श्रुत भक्ति

करते हम आचार्य वन्दना, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
सकल कर्म के क्षय हेतु हम, करते हैं गुरु बारम्बार।।
भाव पुष्प से पूजा वन्दन, स्तव सहित समर्पित अर्घ्य।
श्री जिनश्रुत भक्ति सम्बंधी, करते हैं हम कायोत्सर्ग।।1।।

(9 बार णमोकार मंत्र पढ़े)

एक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख सहस हैं अट्ठावन।
पाँच पदों से सहित सुश्रुत को, मेरा है शत्-शत् वन्दन।।
अर्हत् कथित सु गणधर गूँथित, महा समुद्र रूप श्रुतज्ञान।
भक्ति सहित हम शीष झुकाकर, करते बारम्बार प्रणाम।।1।।

अञ्चलिका

हे ! भगवन् हम इच्छा करते, पावन श्री श्रुत भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्वदोष से मुक्ति का।।
अंगोपांग प्रकीर्णक प्राभृत, प्रथमानुयोग तथा परिकर्म।
सहित पूर्वगत और चूलिका, स्तुति सूत्र कथा जिनधर्म।।2।।

नित्य अर्चना पूजा करते, करते वन्दन सहित नमन।
सर्व कर्म का क्षय हो जावे, दुःखों का हो पूर्ण शमन।।
बोधी का हो लाभ मुझे अरु, विशद सुगति में करूँ गमन।
जिन गुण की सम्पती पाएँ, और समाधि सहित मरण।।3।।

●●●

लघु योगि भक्ति

ईर्यापथ भक्ति शुभ वन्दन, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
सकल कर्म के क्षय हेतु हम, करते हैं गुरु बारम्बार।।
भाव पुष्प से पूजा वन्दन, स्तव सहित समर्पित अर्घ्य।
लघु योगी भक्ती सम्बन्धी, करते हैं हम कायोत्सर्ग।।9।।

(कायोत्सर्ग करें।)

वर्षा ऋतु विद्युत हो गर्जन, वृक्ष मूल में हो अधिवास।
शीत ऋतु में निर्भय साधक, व्यक्त देह लकड़ी सम खासङ्क
रवि किरणों से तप्त ग्रीष्म में, गिरि शिखर पर धारें योग।
मुनि श्रेष्ठ जो मोक्ष सिधारे, हमको दें वह धर्म संयोगङ्क 1ङ्क

वर्षा ऋतु में तरु के नीचे, शीत निशा रहते मैदान।
ग्रीष्म ऋतु पर्वत के ऊपर, वन्दूँ मुनि जो करते ध्यानङ्क 11ङ्क

जो निर्ग्रन्थ गिरि कन्दर में, करते हैं दुर्गों में वास।
लें आहार पात्र में कर के, उत्तम गति वह पावें खासङ्क 12ङ्क

अञ्चलिका

कायोत्सर्ग किया है हमने, योगि भक्ति का हे भगवन्!
उसकेआलोचन की इच्छा, करता हूँ करके वन्दनङ्क
दो समुद्र अरु ढाई द्वीप में, कर्म भूमियाँ हैं पन्द्रह।
आतापन अभ्रावकाश अरु, वृक्ष मूल वीरासन यहङ्क1ङ्क

कुक्कुट आसन एक पार्श्वशुभ, पक्षोपवास आदि युत संत।
उनकी नित्य अर्चना पूजा, वन्दन नमन् गुरु मैं अनन्तङ्क
दुःखों का क्षय हो कर्मों का, रत्नत्रय हो प्राप्त प्रभो!
सुगति गमन हो मरण समाधि, जिन गुण पाऊँ शीघ्र विभोङ्क 2ङ्क

●●●

लघु आचार्य भक्ति

(करते हम आचार्य वन्दना पूर्वाचार्यों के अनुसार)

ईर्यापथ भक्ति शुभ वंदन, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
सकल कर्म के क्षय हेतु हम, करते हैं गुरु बारंबारङ्क
भाव पुष्प से पूजा वन्दन, स्तव सहित समर्पित अर्घ्य।
श्री आचार्य भक्ति संबंधी, करते हैं हम कायोत्सर्गङ्क

(9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

जो श्रुत सागर में पारंगत, स्व पर मत में बुद्धि निपुण।
सम्यक् तप चारित्र की निधि हैं गुरु गुण गण को विशद नमन्ङ्क
छत्तिस मूल गुणों के धारी, पालन करते पञ्चाचार।
शिष्यों का जो करें अनुग्रह, वन्दनीय हैं धर्माचार्यङ्क 1ङ्क

गुरु भक्ति संयम से तिरते, भव सागर है बड़ा महान।
अष्ट कर्म का छेदन करते, जन्म मरण की करते हानङ्क
ध्यान रूप अग्नि में प्रतिदिन, व्रत अरु मंत्र होम में लीन।
षट आवश्यक पालन करने, में रहते हरदम लवलीनङ्क 2ङ्क

तप रूपी धन जिनका धन है, शील व्रतों के ओढ़ें वस्त्र।
लाख चौरासी गुण के हरदम, साथ में अपने रखते शस्त्रङ्क
साधु क्रिया का पालन करते, सूर्य चन्द्र से तेज महान।
मोक्ष महल के द्वार खोलने, हेतु योद्धा संत प्रधानङ्क 3ङ्क

ऐसे सद् साधु जन मुझ पर, हो प्रसन्न दें करुणादान
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण के, सागर हे गुरुवर! गुणवानङ्क
मोक्ष मार्ग के उपदेशक गुरु, सारे जग में चरण शरण।
रक्षा करो हमारी गुरुवर, चरण कमल में विशद नमन्ङ्क 4ङ्क

अञ्चलिका

हे! भगवन् हम इच्छा करते, जैनाचार्य की भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्व दोष से मुक्ति काङ्क
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण अरु, पञ्चाचार के शुभ साधक।
श्री आचार्य अरु उपाध्याय जी, द्वादशांग के आराधकङ्क 5ङ्क
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण जो, रत्नत्रय को पाल रहे।
सर्व साधु जी शुद्ध भाव से, चेतन तत्व सम्भाल रहेङ्क
कर्म दुःख क्षय करूँ समाधि, बोधि सुगति में जाने को।
नित्य वन्दना पूजा अर्चा, करते जिन गुण पाने कोङ्क 6ङ्क

गुरु भक्ति

हे गुरुवर ! कल्पान्त काल तक, तव वचनामृत अमर रहे।
अखिल लोक में परम गुणों की, पावन सरिता नित्य बहे।।
तीन योग से शीष झुकाकर, वन्दन करते हे गुणवन्त !
विमल सिन्धु आचार्य श्री जो, तीन लोक में हों जयवन्त।।
सूर्य समान तेज के धारी, तव चरणों में करूँ नमन्।
चन्द्र समान सु उज्ज्वल वैभव, धारी तुमको है वन्दन।।
दुरित जाल के नाशी तुमको, मेरा हो सादर वन्दन।
मोक्ष प्रदायक गुरु विराग तव, भाव सहित करते अर्चन।।
सकल व्रतों के धारी तुमको, करते हम शत्–शत् वन्दन।
तत्त्व प्रकाशी परम मुनीश्वर, चरणों में करते अर्चन।।
मंगल सुयश बोधकारी तव, चरणों करते विशद नमन्।
भरत सिन्धु हे वन्दनीय ! तव, चरणों में करते वन्दन।।
धर्म प्रभावक परम पूज्य हे !, तव चरणों में करूँ नमन्।
बुद्धि विकाशक प्रबल आपको, करते हम सादर वन्दन।।
परम शान्ति देने वाले हे !, गुरुवर करते हम अर्चन।
विशद सिन्धु गुण के आर्णव को, करते हम शत्–शत् वन्दन।।

वृहद सिद्ध भक्ति

अष्ट कर्म का नाश किया तब, प्रकट हुए गुण उपमातीत।
सिद्ध प्रभु के पद में वन्दन, करता उनके गुण से प्रीतङ्क
स्वर्ण शुद्ध स्व द्रव्यादि से, हो जाता है शुद्ध स्वरूप।
कर्मों के क्षय हो जाने से, आतम होता है निज रूपङ्क 1ङ्क

निज अभाव अरु गुणाभाव से, सिद्धि हो तो तप है व्यर्थ।
कर्म बद्ध स्वकृत फल भोक्ता, कर्मनाश में जीव समर्थङ्क
ज्ञाता दृष्टा स्व तन बराबर, है स्वभाव सिकुड़न विस्तार।
स्वगुण युत उत्पाद सुव्यय ध्रुव, साध्य सिद्धि बिन रही असारङ्क 2ङ्क

अन्तर बाह्य हेतु से निर्मल, दर्शन ज्ञानाचरण से युक्त।
शस्त्र घात से पूर्ण कर्मक्षय, अचिन्त्य सार से हुए संयुक्तङ्क
केवल दर्शन ज्ञान वीर्य सुख, क्षायिक लब्धि अरु सम्यक्त्व।
प्रातिहार्य भामण्डल आदि, से शोभित है जिन का सत्वङ्क 3ङ्क

लोकालोक के ज्ञाता दृष्टा, युगपत् सतत आत्म सुख लीन।
चिर कर्मों का नाश प्रकाशक, समोशरण जिनवर आसीनङ्क
सूर्य चन्द्र आदि ज्योति को, फीका करते जग के ईश।
आतम में आतम के द्वारा, आत्म निमग्न रहते जगदीशङ्क 4ङ्क

बेड़ी सम सब कर्म अघाती, नाश किए पाकर सद्ज्ञान।
अगुरुलघु सूक्ष्मत्व अवगाहन, गुण अनन्त मय आभावानङ्क
अन्य कर्म क्षय करके प्रगटित, निज स्वरूप हो शोभावान।
एक समय में उर्ध्वगमन कर, सिद्धालय जाते भगवानङ्क 5ङ्क

अन्य कोई कारण न पाकर, सिद्ध अमूर्त हैं पुरुषाकार।
किंचित् न्यून पूर्व के तन से, बिम्ब समान शुभम् आकारङ्क
भूख प्यास ज्वर मरण बुढ़ापा, श्वाँस कास मूर्छा पर योग।
दुख के हेतु नाश हुए तब, जाने कौन सुखों का भोगङ्क 6ङ्क

उन सिद्धों को हुआ परम सुख, आत्म शक्ति से अतिशयवान।
हीनाधिक बाधा से वर्जित, प्रतिद्वन्द से रहित महान्ङ्क
अन्य द्रव्य से रहित असीमित, निरुपम विषय रहित सब काल।
सुख अनन्त सिद्धों का शाश्वत, सारभूत उत्कृष्ट विशालङ्क 7ङ्क

रोग जनित पीड़ा से वर्जित, रोगों की औषधि निष्काम।
दृश्यमान सब द्रव्य तिमिर बिन, वहाँ दीन का है क्या कामङ्क
क्षुधा आदि अरु अशुचि नहीं तो, भोजन गन्धमाल है व्यर्थ।
नष्ट हुए ग्लानि निद्रादि, मृदु शैया का फिर क्या अर्थङ्क 8ङ्क

गुण अनन्त के स्वामी हैं जो, जिनका यश है जगत प्रसिद्ध।
नय तप दर्शन ज्ञान चरण अरु, संयम से जो हुए हैं सिद्धङ्क
जो भी देव विशिष्ट जगत में, सिद्धी हेतु करते वन्दन।
त्रिसंध्या में तीन काल के, सिद्धों को मैं करूँ नमनङ्क 9ङ्क

दोहा – बत्तिस दोष से मुक्त हो, शुद्ध भक्ति के साथ।
कायोत्सर्ग कर मुक्त हो, शीघ्र झुकाऊँ माथङ्क 1ङ्क

अञ्चलिका

सिद्ध भक्ति के कायोत्सर्ग में, हुई हो कोई हम से भूल।
हे भगवन्! हम इच्छा करते, वह गल्ती होवे निर्मूलङ्क
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित मय, अष्ट कर्म से पूर्ण विमुक्त।
उर्ध्व लोक के शीर्ष विराजित, अष्ट गुणों से हैं संयुक्तङ्क 11ङ्क

वर्तमान अरु भूत भविष्यत्, तीन काल के जगत प्रसिद्ध।
तप से नय संयम चारित्र से, जो भी जीव हुए हैं सिद्धङ्क
नित्य अर्चना पूजा वंदन, नमन् करें हो सुगति गमन।
बोधि समाधी जिन गुण पाएँ, कर्म कष्ट का होय शमनङ्क 12ङ्क

●●●

वृहद चैत्य भक्ति

(आर्या छन्द)

गौतमादि गणधरों ने, भक्ति की भगवान की।
सर्व पापों की विनाशक, जीव के कल्याण कीङ्क
सत्य को करती प्रकाशित, जगत् में हितकार है।
कर रहा मैं स्तुति प्रभु जी, वन्दना शत् बार हैङ्क

(वीर छन्द)

देवों के मुकुटों की कांति, से शोभित हैं चरण युगल।
जिनके गगन गमन में नीचे, सुर रचते हैं स्वर्ण कमलङ्क
कलुषित मन वाले मानी के, बैर का भी हो जाता अंत।
ऐसे उभयलक्ष्मी धारी, केवल ज्ञानी हों जयवंतङ्क1ङ्क

क्लेश कुगति से जो जीवों के, अशुभ कर्म का करता अंत।
श्रेष्ठ धर्म अभ्युदय दाता, वीतरागमय हो जयवंतङ्क
व्यय उत्पाद धौव्य नय संयुत, अंग पूर्व के भेद समेत।
अमृत तुल्य वचन जिनवर के, भवि जीवों की रक्षा हेतङ्क2ङ्क

भंग तरंग से युक्त द्रव्य का, व्यय उत्पाद धौव्य स्वभाव।
हो जयवंत जैन की वृत्ति, जिसमें है सब दोषाभावङ्क
अव्यय व्याधि रहित सुख निरुपम, खोल रहा है मुक्ति द्वार।
कर्म रहित शाश्वत सुखदायी, देव धर्म आगम जिन सारङ्क3ङ्क

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु को है वंदन।
सर्व जगत् से वंदनीय जो, सब प्रकार से उन्हें नमन्ङ्क4ङ्क

मोहादि सब दोष अरि के, नाशक रज चऊ कर्म विहीन।
पूजा योग्य प्रभु अर्हत् को, नमन्करूँ हो चरणों लीनङ्क
क्षमा आदि गुण गण के साधक, सर्व लोक हित के कारण।
स्वर्ग मोक्ष को देने वाले, जैन धर्म को करूँ नमन्ङ्क5ङ्क

मिथ्या ज्ञान तमोवृत जग को, अनुपम श्रुत है ज्योति रूप।
अंग पूर्वमय विजयशील जिन, श्रुत को वंदन आत्म स्वरूपङ्क6ङ्क

तीन लोक में वंदनीय जिन, ज्योतिष व्यंतर भवन विमान।
मनुज लोक के सब चैत्यों का, तीन योग से करते ध्यानङ्क7ङ्क

तीन लोक के अधिप रहित भव, से पूजित तीर्थंकर देव।
तीन लोक के चैत्यालय मैं, भव शांति को नमूँ सदैवङ्क8ङ्क

परमेष्ठी जिनधर्म जिनागम, चैत्य चैत्यालय रहे महान्।
ज्ञानी जन गणधर आदिक शुभ, हमको भी देवें सद्ज्ञानङ्क9ङ्क

तीन लोक में नर सुर पूजित, अमित कांति शोभित अविराम।
कृत्रिमाकृत्रिम अमित कांतियुत, जिन बिम्बों को करूँ प्रणामङ्क10ङ्क

अमित तेजमय देह यष्टि युत, तीन लोक में कांतिमान।
वैभव संयुत जिन प्रतिमा को, बद्ध अंजली करूँ प्रणामङ्क11ङ्क

जिनगृह में कृतकृत्य जिनेश्वर, वस्त्राभूषण अस्त्र विहीन।
जिन प्रतिमा स्वभाविक अनुपम, वन्दूँ पाप होय सब क्षीणङ्क12ङ्क

भव अन्तक बहु शांत सुसुंदर, उभय लक्ष्मी युक्त महान्।
जिन प्रतिमा सूचित करती शुभ, आत्म विशुद्धि सहित प्रणामङ्क13ङ्क

जिन भक्ति से प्राप्त पुण्य मम्, शीघ्र ही दुष्कृत को खोवे।
पुण्य के फल से जन्म-जन्म में, जैन धर्म ही मम् होवेङ्क14ङ्क

युगपत सब द्रव्यों के ज्ञाता, दर्शन ज्ञान संपदा रूप।
जिन बिम्बों का आत्म विशुद्धि, हेतु करूँ गुणगान अनूपङ्क15ङ्क

भवनालय में श्री से सज्जित, जिन प्रतिमाएँ दीप्तिमान।
श्रेष्ठगति दें हम भव्यों को, करते बारम्बार प्रणामङ्क16ङ्क

कृत्रिमाकृत्रिम जिन प्रतिमाएँ, मध्यलोक में शोभ रहीं।
उन सबको है नमन् हमारा, उभय लक्ष्मी युक्त कहींङ्क18ङ्क

व्यंतर देव विमानों में शुभ, जिन चैत्यालय संख्यातीत।
सब दोषों के नाश हेतु वह, बन जावें मेरे शुभ मीतङ्क19ङ्क

ज्योतिष्लोक में जिन चैत्यालय, बने हैं अतिशय वैभववान।
उभय लक्ष्मी प्राप्ति हेतु हम, भाव सहित करते गुणगानङ्क2ङ्क

सुर सुरेन्द्र के मुकुटमणि की, कांति से पद में अभिषेक
मानो पूज्यनीय प्रतिमाएँ, वन्दूँ उनको माथा टेकङ्क21ङ्क

अतिशय शोभा युक्त श्री जिन, की प्रतिमाएँ अतुल महान्।
स्तुति करना मुश्किल जिनकी, मम् आस्त्रव की कर दें हानङ्क22ङ्क

श्रेष्ठ तीर्थ अर्हंत महानद, भवि जीवों के पाप शमन।
तीन लोक में कारण उत्तम, लौकिक दंभ का करें दमनङ्क23ङ्क

लोकालोक के सुतत्वों का, जिसमें बहता ज्ञान प्रवाह।
शील और व्रत तट द्वय जिसके, भविजन जिसकी रखते चाहङ्क24ङ्क

शुक्लध्यान में लीन मुनीश्वर, राजहंस सम शोभ रहे।
गुप्ति समिति गुण की बालू, स्वाध्याय की गूँज बहेङ्क25ङ्क

उत्तम क्षमारूप हज्जारों भवरें, उठती जहाँ अनेक।
शुभम् लताएँ जग जीवों पर, खिलते सुमन दया के नेकङ्क

जहाँ कठिन अत्यंत परीषह, अतिशीघ्र हो जाँय विलय।
क्षणभंगुर उठ रही तरंगों, का समूह हो जाए क्षयङ्क26ङ्क

फेन कषायों का क्षय करके, रागादि सब दोष विहीन।
मोहादि कर्दम से वर्जित, मरण मगर मच्छों से हीनङ्क27ङ्क

मुनि श्रेष्ठ की स्तुति गुंजन, मंद सबल खग का मनहर।
विविध मुनीश्वर पुलिन जहाँ पर, संवर निर्जरा का निर्झरङ्क28ङ्क

चक्री इन्द्र गणधर आदि सब, महाभव्य पुरुषों में ज्येष्ठ।
विविध पुरुष कलिकाल के मल को, नाश हेतु भक्ति अति श्रेष्ठङ्क29ङ्क

पराजेय गंभीर स्वभावी, अर्हत् नद है सर्वोत्कृष्ट।
न्हवन हेतु उतरें हम उसमें, पाप दूर हों सर्व अनिष्टङ्क3ङ्क

क्रोधाग्नि के विजय से जिनके, नेत्र कमल हैं लाल नहीं।
निर्विकार उद्रेक रहित हैं, न कटाक्ष के बाण कहींङ्क
खेद और मद से वर्जित हैं, प्रहसित मुख हो ज्ञात सदा।
शुद्धि हृदय की अविनाशी है, मानो ऐसा कहे तदाङ्क31ङ्क

रागोदय का वेग लुप्त है, निराभरण हो दीप्तिमान।
प्रकृति रूप निर्दोष निरंतर, मनहर, दिखते आभावानङ्क
रहित हिन्स्यहिंसा के क्रम से, निर्भय अस्त्र शस्त्र से हीन।
विविध वेदना के क्षयकारी, निराहार सुतृप्ति प्रवीनङ्क32ङ्क

नख अरु केश बढ़ें न जिनके, रज मल के स्पर्श विहीन।
दिव्य गंध का उदय हुआ ज्यों, सुरभित चंदन कमल नवीनङ्क
सूर्य चन्द्रमा वज्र आदि शुभ, लक्षण शोभित हैं मनहार।
नयनप्रिय हैं दीप्तिमान शुभ, ज्यों शोभित हों सूर्य हजारङ्क33ङ्क

जीवों का हित श्रेष्ठ मोक्ष है, प्रबल राग मोह अरि जान।
कलुषित मन वाले लख जिनको, अति निर्मल होते गुणगानङ्क
जग में चारों ओर दिखाई, देते हैं सम्मुख भगवान।
शरद ऋतु के चन्द्र बिम्ब सम, उदित दीखते हैं अविरामङ्क34ङ्क

झुकते देव इन्द्र के मुकुटों, की माला के मणि महान्।
चमकीली किरणों से दोनों, चुम्बित चरण प्रभु के जानङ्क
ऐसा रूप आपका है यह, अन्य तीर्थ से जगत भरे।
कुगुरु आदि के दोषोदय से, अंध लोक को शुद्ध करेङ्क35ङ्क

(क्षेपक काव्य)

मानस्तंभ सरोवर निर्मल, जलयुत खाई पुष्पवाटी
कोट नाट्यशाला द्वितियोपवन, वेद्यंतर ध्वज की लाटीङ्क
कोट कल्पतरू कोट सुपरिवृत, स्तूप प्रासादों की पंक्ति
स्वच्छ प्रकर में सुर नर मुनि गण, पीठाग्रे जिन की जगति।36ङ्क

तीन लोक में जिन पुंगव के, भरतैरावत क्षेत्र महान।
उनके मध्य कुलाचल पर्वत, नंदीश्वर के भी स्थानङ्क
मंदर आदि पंचमेरू पर, चैत्यालय जितने मनहार।
उन सबका वंदन करते हैं, भाव सहित हम भी त्रय-बारङ्क37ङ्क

पृथ्वीतल पर कृत्रिमाकृत्रिम, भावन व्यंतर के स्थान।
वैमानिक देवों में स्थित, मनुज लोक के शोभावानङ्क
देवेन्द्रों के द्वारा पूजित, जिन मंदिर जग के मनहार।
करता हूँ स्मरण भाव से, मैं भी उनका मंगलकारङ्क38ङ्क

जंबूद्वीप धातकी पुष्कर, तियक्षेत्रों में हुए महान्।
चन्द्र कमल शिखिगल अरु सोना, वर्षा ऋतु के मेघ समानङ्क

सम्यक् ज्ञान चरण लक्षण युत, कर्म घातिया नाश किए।
भूत भविष्यत वर्तमान के, जिन पद में हम नमन् किएङ्क39ङ्क

श्रीयुत मेरु कुलाचल जम्बू, रजतगिरि शाल्मलि वक्षार।
चैत्यवृक्ष रति रुचकगिरि पर, कुण्डलगिरि अरु इष्वाकारङ्क
मानुषोत्तर अंजनगिरि दधिमुख, शिखरों पर अरु ज्योतिष लोक।
स्वर्गलोक व्यंतर भवनों में, चैत्यालय को देते ढोकङ्क4ङ्क

असुर नाग सुर नर के इन्द्रों, ने पूजा की भली प्रकार।
भवि जीवों के मन को हरते, पापों का करते संहारङ्क
प्रातिहार्य घंटा ध्वज माला, आदि विभूति सहित महान्।
तीन लोक के जिन मंदिर को, नमन करूँ करके गुणगानङ्क41ङ्क

अञ्चलिका

हे भगवन्! हम इच्छा करते, श्री जिन चैत्य की भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्व दोष से मुक्ति काङ्क
ऊर्ध्व, अधः अरु मध्य लोक में, कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालय।
भवन वान ज्योतिष वैमानिक, देव सभी भक्ति में लयङ्क

दिव्य नीर चंदन अक्षत चरु पुष्प दीप फल धूप महान।
नित्य अर्चना पूजन वन्दन, नमन करूँ चरणों में आन।।
मैं भी उनके गुण पाने नित, पूजा अर्चा करूँ त्रिकाल।
भाव सहित मैं करूँ वन्दना, नमन् करूँ करके नत भाल।।

दोहा- दु:ख कर्म क्षय हों मेरे, रत्नत्रय हो प्राप्त।
मरण समाधि हो सुगति, जिनगुण हों सम्प्राप्त।।

●●●

श्री श्रुत भक्ति

उत्सुक लोकालोक देखने, ज्ञानीजन के नेत्र स्वरूप।
प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष ज्ञान की, स्तुति करता मैं अनुरूपङ्क 1ङ्क

योग्य क्षेत्र के द्रव्य सुनियमित, इन्द्रिय मन से जाने कोय।
बहु अवग्रह आदि तीन सौ, छत्तिस ऋद्धि अनेकों होयङ्क 2ङ्क

कोष्ठ बीज पदानुसारिणी, सभिन्न श्रोतृत्व सहित महान्।
अभिनिबोधिक को मैं बन्दूँ, है श्रुतज्ञान! का हेतु प्रधानङ्क 3ङ्क

जिनवर कथित सुगणधर गूंथित, अंग प्रविष्टी बाह्य स्वरूप।
श्रुतज्ञान को नमन् करूँ मैं, द्वय अनेक भेदों कर रूपङ्क 4ङ्क

पर्यय अक्षर पद संघात अरु , प्रतिपत्ति अनुयोग सुजान।
प्राभृतक-प्राभृतक प्राभृतक, वस्तु पूर्व समास भी मानङ्क 5ङ्क

बीस भेद से व्याप्त श्रेष्ठ शुभ, आगम पद्धति है गम्भीर।
द्वादश भेद युक्त जिनश्रुत को, वन्दूँ मैं धारण कर धीरङ्क 6ङ्क

आचारांग सूत्रकृत पावन, स्थानांग अरु समवायांग।
व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्रकृतांग अरु, सप्तम रहा उपासकाध्यनांगङ्क 7ङ्क

अन्तः कृत दश अनुत्तरोपादिक, दशांग और प्रश्न व्याकरणांग।
विपाक सूत्र अरु दृष्टि वाद को, वन्दूँ मैं झुककर साष्टांगङ्क 8ङ्क

परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग शुभ, श्रेष्ठपूर्वगत अंग महान्।
दृष्टिवाद का भेद चूलिका, पांचों को वन्दूँ धर ध्यानङ्क 9ङ्क

परिकर्म एवं चूलिका के भेद

पंच भेद परिकर्म के भाई, चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ती ध्यान।
जम्बूद्वीप अरु दीप सागर, व्याख्या प्रज्ञप्ति रहा महान्ङ्क

जल स्थल अरु रूपगता शुभ, माया अरु आकाश गता।
दृष्टीवाद चूलिका के शुभ, पञ्च भेद का लगा पताङ्क

चौदह भेदों युक्त पूर्वगत, प्रथम पूर्व उत्पाद कहा।
है अग्रायणीय द्वितीय शुभ, तृतीय पुरुवीर्यानुवाद रहाङ्क 1ङ्क

अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व अरु, ज्ञान प्रवाद पूर्व शुभ नाम।
सत्य प्रवाद पूर्व है **षष्टम**, आत्म प्रवाद को करूँ प्रणामङ्क 11ङ्क

कर्म प्रवाद का वन्दन करके, प्रत्याख्यान का करूँ कथन।
विद्यानुवाद प्रवाद दशम है, स्तुति करके करूँ नमनङ्क 12ङ्क

कल्याणवाद पूर्व ग्यारहवां, प्राणवाद अरु क्रिया विशाल।
लोक बिन्दु सार चौदहवाँ, श्रुत को वन्दन है नतभालङ्क 13ङ्क

दश चौदह अरु आठ अठारह, बारह बारह सोलह बीस।
तीस पञ्चदश दश-दश क्रमशः, कहीं वस्तुएँ जैन मुनीशङ्क 14ङ्क

प्राभृत बीस बीस जिनवर ने, प्रति वस्तु में बतलाए।
चौदह पूर्वों के भेदों को, वन्दन करने हम आएङ्क 15ङ्क

पूर्वान्त अपरान्त ध्रुवअध्रुव अरु, च्यवन लब्धि है नाम प्रधान।
अध्रुव संप्रणधि अर्थ भौमशुभ, व्रतादि सर्वार्थ कल्पनीय ज्ञानङ्क16ङ्क

अतीतकाल अरु रहा अनागत, सिद्धि और उपाध्य शुभ नाम।
वस्तुएँ अग्रायणीय पूर्व की, उनको बारम्बार प्रणामङ्क17ङ्क

पञ्चम वस्तु का चतुर्थ है, कर्म प्रभृति प्राभृत अनुयोग।
चौबीस भेद कहे जिनवर ने, उनका पाए शुभ संयोगङ्क18ङ्क

उसके भेद हैं कृति वेदना, स्पर्शन कर्मप्रकृत्ति अरु बन्ध।
और निबन्धन प्रक्रम अनुपक्रम, अभ्युदय है मोक्ष अबन्धङ्क19ङ्क

संक्रम लेश्या लेश्याकर्म अरु, लेश्या परिणाम अरु सातासात्।
ह्रस्व और भव धारणीय शुभ, पुद्गलात्म अरु निधत्तानिधत्तङ्क2ेङ्क

निकाचितानिकाचित कर्म स्थिति, पश्चिम स्कन्ध अरु अल्पबहुत्व।
जो हैं द्वार समान प्रवेश को, पा जाऊँ मैं उनका सत्वङ्क21ङ्क

एक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख सहस पद अट्ठावन।
पाँच अधिक पद द्वादशांग के, उनको है शत्शत् वन्दनङ्क 22ङ्क

सोलह सौ चौतिस कोटि शुभ, लाख तिरासी सात हजार।
शतक आठ सौ और अठासी, पद के अक्षर हैं मनहार।। 23ङ्क

सामायिक चतुर्विंशति स्तव, देव वन्दना प्रतिक्रमण।
वैनयिक अरु कृति कर्मशुभ, दशवैकालिक परम शरणङ्क 24ङ्क

उत्तराध्यन भी रहा श्रेष्ठ शुभ, कल्पव्यवहार को करूँ नमन्।
कल्पाकल्प अरु महाकल्पशुभ, पुण्डरीक को शत् वन्दनङ्क 25ङ्क

महापुण्डरीक और निषधिका, वस्तु तत्व का करे कथन।
अंग बाह्य के कहे प्रकीर्णक, श्रुत परिपाटी को वन्दनङ्क 26ङ्क

अवधिज्ञान प्रत्यक्ष भेदयुत, द्रव्यादि मर्यादा वान।
देशावधि परमावधि पावन, वन्दू सर्वावधि महान्ङ्क27ङ्क

पर के मन में स्थित रूपी, द्रव्य जानते जो गुणवान।
ऋजु विपुल मति भेद रूप शुभ, वन्दूं मैं मनः पर्यय ज्ञानङ्क 28ङ्क

तीन काल के द्रव्य जो युगपत, जानें सर्व सुखों की खान।
एक रहा क्षायिक अनन्त शुभ, वन्दूं मैं वह केवलज्ञानङ्क 29ङ्क

तीन लोक के नेत्र स्वरूपी, मति ज्ञान आदि ध्याऊँ।
शीघ्र ज्ञान ऋद्धि अरु फल मैं, अविनाशी सुख को पाऊँङ्क 3ेङ्क

अञ्चलिका

हे! भगवन् हम इच्छा करते, पावन श्री श्रुत भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्वदोष से मुक्ति काङ्क
अंगोपांग प्रकीर्णक प्राभृत, प्रथमानुयोग तथा परिकर्म।
सहित पूर्वगत और चूलिका, स्तुति सूत्र कथा जिनधर्मङ्क
नित्य अर्चना पूजा करते, करते वन्दन सहित नमन्।
सर्व कर्म का क्षय हो जावे, दुःखों का हो पूर्ण शमनङ्क
बोधि का हो लाभ मुझे अरु, विशद सुगति में करूँ गमन।
जिन गुण की सम्पत्ति पाऊँ, और समाधि सहित मरणङ्क

●●●

वृहद चारित्र भक्ति

बाजूबन्द केयूर हार से, शोभित देह उच्च सिर होय।
कान्तिमान है मुकुट मणि से, त्रिभुवन के इन्द्रादि सोयङ्क
नम्रीभूत किए जो मुनिवर, अपने चरण कमल के पास।
अती पूज्य उस पञ्च भेद युत, पञ्चाचार को वन्दूँ खासङ्क 1ङ्क

श्रीमत् ज्ञातृ वंश के इन्दु, धर्म तीर्थ करता भगवान।
व्यंजन अर्थ अरु उभय अविकलता, विमल कालशुद्धि उपधानङ्क
अनिह्नव अरु बहुमान कहे, वसु, ज्ञानाचार के भेद महान्।
तीन योग से करूँ वन्दना, कर्मों का क्षय हो भगवानङ्क 2ङ्क

शंका दृष्टि विमोह त्याग कर, भोगाकांक्षा त्याग करें।
उपगूहन वात्सल्य भावयुत, मन में ग्लानि नहीं धरेंङ्क
जिन शासन का उद्योतन कर, स्थितिकरण रूपआचार।
शीष झुका सद्दर्शन को मैं, वन्दन करता बारम्बारङ्क 3ङ्क

मोक्ष गति की प्राप्ति हेतु शुभ, हो एकान्त में शयनाशन।
व्रत संख्यान करें ऊनोदर, कायक्लेश करें अनशनङ्क
इन्द्रिय रूपी गज के मद को, बढ़ा रहे सुस्वादु रस।
छह प्रकार बहिरंग तपों को, तपते करके इन्द्रिय वशङ्क 4ङ्क

शुभ कार्यों से विचलित जन फिर, स्थिर होवें करके ध्यान।
वृद्ध बाल रोगी गुरु की शुभ, वैयावृत्ती करें महान्ङ्क
कायोत्सर्ग विनय धारण कर, प्रायश्चित्त करते स्वाध्याय।
षट् विधि तप अभ्यन्तर वन्दूँ, कर्म नाश हो मन वच कायङ्क 5ङ्क

सम्यक् ज्ञान रूपी नेत्रों से, जिनमत में रखते श्रद्धान।
निज शक्ति को नहीं छिपाकर, तप में करते प्रयत्न महान्ङ्क
छिद्र रहित छोटी नौका सम, भव सागर से करती पार।
प्रबल गुणों से युक्त पूज्य शुभ, वन्दूँ मुनि का वीर्याचारङ्क 6ङ्क

मन वच तन से होने वाली, श्रेष्ठ गुप्तियाँ होती तीन।
पञ्च समितियाँ ईर्या आदि, पञ्च महाव्रत रहे अधीनङ्क
तेरह विधि चारित्र कहा शुभ, जिसको नमन करूँ धर शीष।
परमेष्ठी महावीर प्रभु जो, पूर्व में देखे अन्य ऋशीषङ्क 7ङ्क

आत्माश्रित सुख उदय से अनुपम, केवल दर्शन ज्ञान प्रकाश।
उज्वल अविनाशी लक्ष्मी अरु, परम तीर्थ मंगल की आशङ्क
पञ्च भेद से युक्त कहा है, वीतराग मुनि का आचार।
सम्यक् चारित से महान् सब, गुरु को वन्दन बारम्बारङ्क 8ङ्क

आगम के प्रतिकूल प्रवर्तन, किया कराया हो कोई।
उस से संचित पाप नष्ट हों, नये दूर होवें सोईङ्क
सप्त ऋद्धियाँ तप की निधि यह, श्रेष्ठ तपस्वी मुनि पावें।
दुष्कृत है अज्ञान प्रवृत्ति, मम् निन्दा से नश जावेंङ्क 9ङ्क

भव दुख से भयभीत है जो भी, नित्योदित लक्ष्मी की चाह।
निकट भव्य सुमति प्राप्त शुभ, शांत हुई पापों की दाहङ्क
भव्य जीव अनुपम तेजस्वी, मोक्ष हेतु करते प्रस्तार।
जिनवर कथित उच्च सीढ़ी पर, चारित धारी करें विहारङ्क 1ङ्क

अञ्चलिका

कायोत्सर्ग किया जो मैंने, चरित्र भक्ति का भगवन।
इच्छा करता तत् सम्बन्धी, विशद करूँ मैं आलोचनङ्क
सद्दर्शन में रहा अधिष्ठित, करता सम्यक् ज्ञान प्रकाश।
सर्व प्रमुख है मोक्ष का मारग, कर्म निर्जरा है फल खासङ्क 11ङ्क

तीन गुप्तियों से रक्षित है, क्षमा रहा जिनका आधार।
ज्ञान ध्यान का जो साधन है, समिति महाव्रत पंच प्रकारङ्क
है प्रवेश समता का जिसमें, सम्यक् चारित रहा महान।
सदा वन्दना पूजा अर्चा, नमन् करूँ जिसका सम्मानङ्क 12ङ्क

दोहा – दु:ख कर्म क्षय हों मेरे, रत्नत्रय हो प्राप्त।
मरण समाधि सुगति हो, जिन गुण हो सम्प्राप्तङ्क

वृहद योगि भक्ति

जन्म मरण अरु जरा रोग दुःख, पीड़ित सहस शोक संताप।
दुःसह नरक पतन पीड़ित हो, हेयाहेय से जाग्रत आपङ्क
जीवन जल बिन्दु सम चंचल, है भव विद्युत मेघ समान।
यह सब सोच आत्मिक शांति, हेतू वन में करते ध्यानङ्क 1ङ्क

मोह नष्ट हो गया है जिनका, गुप्ति समिति व्रत से युक्त।
ध्यान और अध्ययन के वश में, जिनका मन रहता संयुक्तङ्क
कर्मों का क्षय करने हेतु, मोक्ष सुखों का ले आधार।
तपश्चरण करते हैं मुनिवर, वन में जाके कई प्रकारङ्क 2ङ्क

तन है लिप्त मैल से जिनका, शिथिल किए कर्म बन्धन।
काम दर्प रति दोष कथाएँ, मात्सर्य रहित दिगम्बर तनङ्क
रवि की किरणों के समूह से, तप्त शिलाओं से संयुक्त।
गिरि शिखरों पर सूर्य के सम्मुख, तपश्चरण से रहते युक्तङ्क 3ङ्क

सम्यक् ज्ञान रूप अमृत का, जो मुनिराज करें नित पान।
क्षमा रूप जल से सिंचित है, पुण्य मयी करते स्नानङ्क
जो संतोष रूप क्षत्रों को, धारण करते महा मुनीश।
सहते हैं संताप घोर वह, बनते तीन लोक के ईशङ्क 4ङ्क

मोर कण्ठ अलि सम काले जो, चित्रित इंद्र धनुष सम खास।
भीम गर्जना शीतल वायु, वज्र प्रचण्ड हो वर्षा वासङ्क

मेघाच्छादित गगन देख मुनि, निर्भय होकर बारम्बार।
विषम रात में तरु के नीचे, सहसा रहते हो अविकारङ्क 5ङ्क

जल धारा रूपी बाणों से, ताड़ित हैं जो श्रेष्ठ मुनीश।
भव दुख से भय भीत रहे जो, धैर्यवान हैं परम ऋशीषङ्क
परिषहरूप शत्रुओं का भी, करने वाले हैं जो घात।
चारित से विचलित न होते, करें सदा कर्मों को मातङ्क 6ङ्क

अविरत हिम कण मिश्रित जलयुत, जिससे गिरते तरु के पात।
सांय-सांय का शब्द निरन्तर, वायु करे कठोराघातङ्क
श्रमण धैर्य कम्बल से आवृत, सूख रहा है जिनका गात।
चौराहे पर बिता रहे हैं, हिम युत विषय शक्ति की रातङ्क 7ङ्क

वृक्ष मूल अभ्रावकाश शुभ, आतापन यह तीनों योग।
सर्व तपों से शोभित हैं जो, वृद्धिकारी पुण्य संयोगङ्क
परमानन्द सुखों के इच्छुक, वीतराग मुनिवर भगवान।
हम सब को उत्कृष्ट समाधि, विशद आप ही करो प्रदानङ्क 8ङ्क

धर्म योग से कर्म नाशकर, हुए आप योगों में लीन।
श्री जिन योगीश्वर को वन्दूँ, तीन योग में हो लवलीनङ्क 9ङ्क

(लघु योगि भक्ति)

वर्षा ऋतु विद्युत हो गर्जन, वृक्ष मूल में हो अधिवास।
शीत ऋतु में निर्भय साधक, व्यक्त देह लकड़ी सम खासङ्क

रवि किरणों से तप्त ग्रीष्म में, गिरि शिखर पर धारें योग।
मुनि श्रेष्ठ जो मोक्ष सिधारे, हमको दें वह धर्म संयोगङ्क 1ङ्क

वर्षा ऋतु में तरु के नीचे, शीत निशा रहते मैदान।
ग्रीष्म ऋतु पर्वत के ऊपर, वन्दूँ मुनि जो करते ध्यानङ्क 11ङ्क

जो निर्ग्रन्थ गिरि कन्दर में, करते हैं दुर्गों में वास।
लें आहार पात्र में कर के, उत्तम गति वह पावें खासङ्क 12ङ्क

अञ्चलिका

कायोत्सर्ग किया है हमने, योगि भक्ति का हे भगवन्!
उसके आलोचन की इच्छा, करता हूँ करके वन्दनङ्क
दो समुद्र अरु ढाई द्वीप में, कर्म भूमियाँ हैं पन्द्रह।
आतापन अभ्रावकाश अरु, वृक्ष मूल वीरासन यहङ्क1ङ्क

कुक्कुट आसन एक पार्श्वशुभ, पक्षोपवास आदि युत संत।
उनकी नित्य अर्चना पूजा, वन्दन नमन् गुरु मैं अनन्तङ्क
दुःखों का क्षय हो कर्मों का, रत्नत्रय हो प्राप्त प्रभो!
सुगति गमन हो मरण समाधि, जिन गुण पाऊँ शीघ्र विभोङ्क 2ङ्क

ampeZr {~IoaZm h¡ Vmo, {MamJ H$s ^m±{V ObZm grImoŸ&&
g$gma nma H$aZm h¡ Vmo, _moj_mJ© na MbZm grImoŸ&&
`{X {gÕ ~ZZm MmhVo hmo Vmo, {gÕr àmá H$aZr hmoJoŸ&&
CgHo$ nhbo {gÕm| H$s ^m±{V, g~go {_bZm grImoŸ&&

वृहद आचार्य भक्ति

सिद्धों के गुण की स्तुति में, रहते हैं जो हरदम लीन।
तिय गुप्ति से पूरित है अरु, क्रोधादि के जाल विहीन।
रखते हैं सम्बन्ध मुक्ति से, सत्य वचन जो धार रहे।
भाव सहित वन्दन है उनको, ऐसे गुरु आचार्य कहेङ्क 1ङ्क

जिन शासन रूपी सद्दीपक से, शोभित है जिनकी देह।
मुनि समूह में श्रेष्ठ रहे जो, रत्नत्रय है जिनका गेहङ्क
बद्ध कर्म के विपुल मूल को, घात हेतु हैं कुशल महान्।
नमन् उन्हें जिनका उत्तम शुभ, मन सिद्धि का करता ध्यानङ्क 2ङ्क

गुण रूपी मणियों से विरचित, सदा काल है जिनकी देह।
निश्चय से षट् द्रव्यों को भी, धार रहे हैं जग में येहङ्क
जो प्रमाद चर्या से विरहित, सम्यक् दर्शन से हैं शुद्ध।
गण के सन्तुष्टि कारक को, नमूँ योग से परम विशुद्धङ्क 3ङ्क

जिनका उग्र सुतप करता है, मोह का पूर्ण रूप संहार।
जो प्रशस्त शुभ शुद्ध हृदय से, उत्तम रखते हैं व्यवहारङ्क
प्रासुक निलय पाप से विरहित, चित्त करे आशा का नाश।
जो कुमार्ग के नाशक हैं वह करें, आचार्य हृदय में वासङ्क 4ङ्क

पंचेन्द्रिय मन वचन काय अरु, हस्त पाद दश मुण्ड कहे।
बहुत दण्ड के धारी मुनियों, के समूह से हीन कहेङ्क
सकल परीषह जीत रहे हैं, करें निरन्तर आतम ध्यान।
हीन क्रियाओं से प्रमाद की, वन्दन उनको ससम्मानङ्क 5ङ्क

अचल रहे निद्रा के विजयी, दुष्ट कष्ट कर लेश्या हीन।
करते हैं व्युत्सर्ग खड़े हों, ध्यान करें आतम में लीनङ्क

निर्जन में आवास हो जिनका, आगम की विधि के अनुसार।
इद्रिय रूपी गज के विजयी, तन अलिप्त सम्यक् आचारङ्क 6ङ्क

उत्कुट आदि आसन से तप, करते हैं जो अतुल महान्।
स्वाध्याय जो करें अखण्डित, हृदय पवित्र रहे विद्वानङ्क
ईर्ष्या भाव लोभ रागादि मान और अज्ञान विहीनङ्क
सरल भाव के धारी हैं जो, निज स्वभाव में रहते लीनङ्क 7ङ्क

आर्त रौद्र के पक्ष को जिसने, पूर्ण रूप से नाश किया।
धर्म शुक्ल का निज अन्तर में, यथा योग्य प्रकाश कियाङ्क
नरकादि के द्वार बन्द कर, हुए स्वयं ही पुण्य स्वरूप।
अभ्युदय गणनीय है जिनका, नष्ट हुए सब गारव भूपङ्क 8ङ्क

पावस में तरु मूल योगधर, ग्रीष्म काल आतापनयोग।
अभ्रावकाश धारें सर्दी में, सप्त भयों का नहिं संयोगङ्क
जन-जन कि हितकारी चर्या, जिनके सब पापों से हीन।
जो प्रभाव से युक्त रहे हैं, मन मेरा हो उनमें लीनङ्क 9ङ्क

इस प्रकार गुण कहे जो ऊपर, उनसे युक्त है स्थिर योग।
लोकोत्तर हैं श्रेष्ठ निरन्तर, गुरु आचार्य का हो संयोगङ्क
हस्त कमल मुकुलीकृत करके, शीष झुकाकर करूँ नमन्।
आगम कथित विधि के द्वारा, महत् भक्ति से हो वन्दनङ्क 1ङ्क

सकल कलुषत के कारण जो, जन्म जरा मृत्यु बंधन।
परम गुरु आचार्य श्री जो, उनका करते हैं खण्डनङ्क
पाप रहित अक्षय अविनाशी, शिव पाना चाहूँ मैं नाथ।
अव्याबाध मोक्ष सुख पाने, चरणों झुका रहा मैं माथङ्क 11ङ्क

(लघु आचार्य भक्ति)

जो श्रुत सागर में पारंगत, स्व पर मत में बुद्धि निपुण।
सम्यक् तप चारित की निधि हैं, गुरु गुण गण को विशद नमनङ्क
छत्तिस मूल गुणों के धारी, पालन करते पञ्चाचार।
शिष्यों का जो करें अनुग्रह, वन्दनीय हैं धर्माचार्यङ्क

गुरु भक्ति संयम से तिरते, भव सागर है बड़ा महान्।
अष्ट कर्म का छेदन करते, जन्म मरण की करते हानङ्क
ध्यान रूप अग्नि में प्रतिदिन, व्रत अरु मंत्र होम में लीन।
षट् आवश्यक पालन करने, में रहते हरदम लवलीनङ्क

तप रूपी धन जिनका धन है, शील व्रतों के ओढ़े वस्त्र।
लख चौरासी गुण के हरदम, साथ में अपने रखते शस्त्र।
साधु क्रिया का पालन करते, सूर्य चन्द्र से तेज महान्।
मोक्ष महल के द्वार खोलने, हेतु योद्धा संत प्रधानङ्क

ऐसे सद् साधु जन मुझ पर, हो प्रसन्न दें करुणादान।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण के, सागर हे गुरुवर! गुणवानङ्क
मोक्ष मार्ग के उपदेशक गुरु, सारे जग में चरण शरण।
रक्षा करो हमारी गुरुवर, चरण कमल में विशद नमन्ङ्क

सब शास्त्रों के ज्ञाता हैं जो, लोक रीति को जान रहे।
बुद्धिमान निस्पृह प्रतिभायुत, प्रशमवान गुण निधि कहेङ्क
प्रष्टोत्तर हैं प्राग प्रश्न सह, परानिन्द्य पर को मनहार।
प्रभु स्पष्ट मधुर वाणी युत, धर्म कथा नायक आचार्यङ्क

पर उपदेशक शुद्ध आचरण, पूर्ण ज्ञान निस्पृह गुणवान।
भविजन को सत् पथ दिखलाने, में करते पुरुषार्थ महान्ङ्क

लोक व्यवहार के धारी हैं मृदु, मार्दव धारी विद्वत पूज्य।
सज्जन मुनियों के गुरु स्वामी, नहीं अन्य के विशद सुपूज्यङ्क

वंश रहा जिनका विशुद्ध शुभ, जो सुडौल हैं सुन्दर रूप।
धर्म कथाओं के उपदेशक, चरणों में झुकते कई भूपङ्क
सुख ऋद्धि आदि लाभों में, जिनका चित्त न हो आसक्त।
सदाचार्य होते जित् इन्द्रिय, बुधजन श्रेष्ठ कहे हों भक्तङ्क

कामदेव की ध्वज के विजयी, गुरुवर सर्व परिग्रह हीन।
निर्विकार निर्मल संयम में, चित्त रहे जिनका लवलीनङ्क
सुनय कथन में निपुण रहे जो, सर्व तत्व के ज्ञाता नाथ!
भय है जिनको जन्म मरण से, सदाकाल सद्गुरु पद माथङ्क

सम्यक् दर्शन मूल है जिसका, सम्यक् ज्ञान रहा स्कंध।
सम्यक् चारित की शाखायें, देती है मन को आनन्दङ्क
मुनि समूह रूपी पक्षी से, युक्त रहा शुभ सघन विशाल।
तरुवर शुभ आचार्य रूप को, विशद करूँ मैं भी नत भालङ्क

अञ्चलिका

हे! भगवन् हम इच्छा करते, जैनाचार्य की भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्व दोष से मुक्ति काङ्क
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन अरु, पंचाचार के शुभ साधक।
श्री आचार्य अरु उपाध्याय जी, द्वादशांग के आराधकङ्क

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण जो, रत्नत्रय को पाल रहे।
सर्व साधु जी शुद्ध भाव से, चेतन तत्व संभाल रहेङ्क
कर्म दुःख क्षय करूँ समाधि, बोधि सुगति में जाने को।
नित्य वन्दना पूजा अर्चा, करते जिन गुण पाने कोङ्क

●●●

श्री पञ्च गुरु भक्ति

श्री युत इन्द्रों के मुकटों में, मणि किरण धारा अभिराम।
चरण युगल प्रच्छालित करती, जिनको भक्ति सहित प्रणामङ्क 1ङ्क

दुष्ट कर्म रिपु नाश किए वसु, सिद्ध अष्ट गुण धारी नन्त।
समीचीन तुष्टी के इच्छित, नित्य नमन हो विशद अनन्तङ्क 2ङ्क

शुद्ध आचरण के द्वारा शुभ, श्रुत सागर को तैर रहे।
आचार्यों के चरण कमल युग, में मेरा यह शीष रहेङ्क 3ङ्क

उग्रमान मिथ्यावादी का, करते जिनके वचन विनाश।
पाप रूप शत्रु मेरे सब, उपाध्याय कर देवें नाशङ्क 4ङ्क

सद्दर्शन का दीप प्रकाशित, ज्ञेय तत्व को जाने ज्ञान।
सच्चरित्र की ध्वज से संयुत, रक्षा करें साधु गुणवानङ्क 5ङ्क

अर्हत्सिद्धाचार्य उपाध्याय, साधु निर्मल गुण संयुक्त।
मोक्ष हेतु त्रिसंध्या वन्दन, पञ्च पदों से जो संयुक्तङ्क 6ङ्क

सब पापों का नाशक पावन, पञ्च नमस्कारक यह मंत्र।
सब मंगल में पहला मंगल, कहा गया अपराजित मंत्रङ्क 7ङ्क

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु हैं जगत् महान्।
सब मंगल पापों के नाशक, मोक्ष लक्ष्मी करें प्रदानङ्क 8ङ्क

रत्नत्रय की सिद्धि हेतु, सब जिनेन्द्र को करूँ नमन्।
सिद्धाचार्य उपाध्याय साधु, रत्नत्रय को है वन्दनङ्क 9ङ्क

सुराधीश के चूड़ामणि की, किरणों से शोभित अविराम।
परमेष्ठी पाचों के रक्षक, चरणाम्बुज हों मम् सुखधामङ्क 10ङ्क

प्रातिहार्य युत अरिहन्तों की, सिद्धों की वसु गुण के साथ।
पञ्चाचार का पालन करते, जिनाचार मुनियों के नाथङ्क
विनय पूर्वक उपाध्याय की, भक्ति करके करूँ प्रणाम।
अष्ट योग युत अष्ट अंग से, साधु गुण गाऊँ अभिरामङ्क 11ङ्क

अञ्चलिका

हे भगवन्! मैं इच्छा करता, पञ्च महागुरु भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया है मैंने, सर्व दोष से मुक्ति काङ्क
प्रातिहार्य वसु गुण युत अर्हत्, ऊर्ध्वलोक में स्थित सिद्ध।
प्रवचन माता अष्ट सहित हैं, परम पूज्य आचार्य प्रसिद्धङ्क 1ङ्क

आचारांग आदि श्रुतज्ञानी, उपदेशक उपाध्याय महान्।
रत्नत्रय गुण पालन में रत, रहते सर्व साधु गुणवानङ्क
कर्म दुःख क्षय करूँ समाधि, बोधि सुगति में जाने को।
नित्य वन्दना पूजा अर्चा, करते जिन गुण पाने कोङ्क 2ङ्क

●●●

ho à^mo ! _oar AmIm| _|, dh Vmgra hmo OmEŸ&
ZOa {Og MrO na S>mby±, Voar Vñdra hmo OmEŸ&&
^mdZm h¡ h_mar `h, g^r BŸgmZ ^JdmZ ~Z|Ÿ&
mH$ amhm| na Mbo, BŸgmZ Vmo dh _hmdra ~Z Om`|Ÿ&&

श्री शांति भक्ति

चरण शरण को प्राप्त करें न, भव्य जीव तव हे भगवान्!
भव सागर है कारण जिसमें, अरु विचित्र कर्मों की खानङ्क
अती दैदीप्य उग्र किरणों से, भूमण्डल सारा ढक जाय।
ग्रीष्म रवि ज्यों चन्द्र किरण अरु, जल छाया से नेह करायङ्क 1ङ्क

ज्यों क्रोधित फणधर डसने से, दुर्जय विष ज्वाला के योग।
विद्या औषधि मंत्र हवन जल, शांत होय पाकर संयोगङ्क
तव चरणाम्बुज की स्तुति से, शीघ्र विघ्न सब होवें दूर।
शांत होय तन की बाधाएँ, क्या विस्मय इसमें भरपूरङ्क 2ङ्क

तप्त स्वर्ण गिरि की कांति को, फीका करती जिनकी देह।
जीवों की पीड़ा क्षय होती, प्रणत पाद करने से येहङ्क
उदित रवि किरणों की दीप्ति, के आघात से निकल रही।
नेत्र कांति को हरने वाली, रात शीघ्र क्षय रूप कहीङ्क 3ङ्क

त्रय लोकेश्वर के विनाश से, विजय प्राप्त हो गये अति क्रूर।
उस काल की दावाग्नि से, जग में बच पाना अति दूरङ्क
नाना शतक जन्म के अन्दर, संसारी जीवों के अग्र।
पाद पद्म द्वय स्तुति सरिता, क्या वारण न करे समग्रङ्क 4ङ्क

लोकालोक में एक निरन्तर, विस्तृत ज्ञान मूर्ति हे नाथ!।
नाना रत्न जड़ित सुन्दर शुभ, श्वेत छत्र त्रय जिनके माथङ्क
प्रभु के चरण युगल की स्तुति, रव से रोग शीघ्र हों दूर।
मात्र सिंह के गर्जन से ज्यों, गज भागें भय से भरपूरङ्क 5ङ्क

दिव्य स्त्री के नयन प्रिय हे!, विपुल श्री चूड़ामणि श्रेष्ठ।
बाल रवि के द्युति हारी शुभ, भामण्डल युत भवि के इष्टङ्क

अव्याबाध अचिन्त्य अतुल शुभ, अनुपम सारभूत अविनाश।
तव चरणारविन्द युगलों की, स्तुति से हो सुख में वासङ्क 6ङ्क

सूर्य तेज किरणों से जब तक, नहीं उदित हो करें प्रकाश।
पंकज वन इस लोक में तब तक, निद्रा भार के श्रम से खासङ्क
चरण द्वय रवि के प्रसाद का, उदय नहीं हो हे भगवान!।
तब तक जीवों का समूह यह, प्राय: पाप धरे बहु जानङ्क 7ङ्क

शांति मन: शांति के इच्छुक, पृथ्वी तल पर शांति जिनेश।
बहु प्राणी तव चरण कमल के, आश्रय से हो शांत विशेषङ्क
तव चरणों को देव मान प्रभु, भक्त सदा भक्ति के साथ।
शान्त्यष्टक सम्यक्त्व हेतु शुभ, निर्मल दया भाव हो नाथङ्क 8ङ्क

चन्द्र समान सुमुख अति निर्मल, संयम व्रत धारी गुणवान।
शील अठारह सहस देह में, लक्षण एक सौ आठ महान्ङ्क
कमलाशन पर शोभित हैं जो, जिन उत्तम हे शांतिनाथ!।
शत् इन्द्रों से पूज्य आपके, चरणों झुका रहे हम माथङ्क 9ङ्क

ईप्सित चक्रवर्तियों में से, चक्रवर्ति थे जो पञ्चम।
इन्द्र नरेन्द्रों के समूह से, पूजित रहे विशद हरदमङ्क
शांति करने वाले जग में, शांतिनाथ है जिनका नाम।
महा शांति की इच्छा से मैं, शांति जिन को करूँ प्रणामङ्क 1ङ्क

दिव्य तरु सुर पुष्प वृष्टि हो, दिव्य ध्वनि शुभ सिंहासन।
दोनों ओर चँवर ढुरते हैं, भामण्डल अति मन भावनङ्क
दुन्दुभि नाद होय छत्र त्रय, शोभित होते शांतिनाथ।
प्रातिहार्य से युक्त श्री जिन, को हम झुका रहे हैं माथङ्क 11ङ्क

सर्व जगत् में पूज्यनीय हैं, शांति कर हे शांतिनाथ!।
विशद भाव से वन्दन करता, चरण झुकाऊँ अपना माथङ्क

सर्व जगत् को शीघ्र करो, हे शांतिनाथ! शुभ शांति प्रदान।
स्तुति पढ़ने वाला हूँ मैं, दीजे मुझे शांति का दानङ्क 12ङ्क

सुरगण से स्तुत हैं जिनके, चरण कमल सुन्दर छविमान।
कर्णाभरण हार कुण्डल से, रत्न मुकुट से जिनकी शानङ्क
इन्द्र पूजते हैं जिनको वे, श्रेष्ठ वंश के जगत् प्रदीप।
तीर्थंकर श्री शांति जिन मम्, शांति देने रहें समीपङ्क 13ङ्क

धर्म आयतन के रक्षक हैं, पूजा करते भली प्रकार।
मुनियों के हैं इन्द्र तपस्वी, श्रेष्ठ रहे जग के आचार्यङ्क
देश राष्ट्र राजा को अनुपम, नगरवासियों को भी साथ।
शांति दीजिए शांति प्रदाता, हे जिनेन्द्र! श्री शांतिनाथङ्क 14ङ्क

हो कल्याण प्रजा का सारी, धार्मिक हो राजा बलवान।
जल वृष्टि हो यथा समय पर, जग में हो व्याधि की हानङ्क
चौर मारि दुर्भिक्ष जगत् में, न हो क्षण के लिए हे नाथ!
सर्व सुखोंकर धर्म चक्रशुभ, नित्य प्रभावशाली हो साथङ्क 15ङ्क

यहाँ अनुग्रह से जिनके शुभ, मोक्ष के इच्छुक मुनिवर श्रेष्ठ।
रत्नत्रय निर्दोष प्रकाशित, द्रव्य प्राप्त हो जाए यथेष्ठङ्क
रत्नत्रय का साधक उत्तम, प्राप्त होय शुभ उत्तम देश।
प्राप्त काल हो तप का साधक, भाव प्राप्त हों शुद्ध विशेषङ्क 16ङ्क

केवल ज्ञान रवि से शोभित, कर्म घातिया कीन्हे नाश।
वृषभ आदि तीर्थंकर जग में, शांति में देवे शुभ वासङ्क 17ङ्क

क्षेपक काव्य

शिरोधार्य जिन आज्ञा करते, शांति प्राप्त करें वह लोग।
तपश्चरण जो करें निरन्तर, पावें शांति का संयोगङ्क

जित कषाय मुनियों के उर में , समता रस का फूल खिले।
स्वाभाविक महिमा मण्डित जो, मुनियों को शिवराज मिलेङ्क 1ङ्क

संयम रूपी अमृत पीकर, तृप्त हुए मुनि हों जयवंत।
आत्म तत्व का उदय प्राप्त कर, आनन्दित जग के सब संतङ्क
मोक्ष लक्ष्मी की प्राप्ति का, करते हैं दुस्सह उद्योग।
तीन लोक में जिन शासन की, हो प्रभावना का शुभ योगङ्क 2ङ्क

धर्मी के श्री श्रेय बढ़े शुभ, सर्व जगत् में हो सुखकार।
नीतिवान नृप शूर वीर हो, ज्ञानी से हो ज्ञान प्रसारङ्क
एक प्रार्थना हो सब ही की, पाप नाम का होवे अन्त।
श्री जिनेन्द्र का वीतरागमय, शिवकृत धर्म रहे जयवन्तङ्क 3ङ्क

अञ्चलिका

कायोत्सर्ग किया जो मैंने, शांति भक्ति का हे भगवन्!
इच्छा करता उस सम्बन्धी, विशद करूँ मैं आलोचनङ्क
महत् पञ्च कल्याणक संयुत्, प्रातिहार्य हैं अष्ट महान्।
चौंतिस अतिशय से संयुक्त हैं, बत्तिस देव झुके पद आनङ्क 1ङ्क

वासुदेव बलदेव चक्रधर, ऋषी मुनि अरु यति अनगार।
लाखों स्तुतियों के गृह हैं जो, वृषभादि जिन मंगलकारङ्क
महापुरुष जो हुए सभी की, करूँ नित्य पूजन अर्चन।
वन्दन करता नमस्कार मैं, हृदय बसो मेरे भगवन्ङ्क 2ङ्क

दुःखों का क्षय हो कर्मों का, पूर्ण रूप से होय विनाश।
रत्नत्रय की प्राप्ति हो मम्, श्रेष्ठ गति में होय निवास।
मरण समाधि मैं पा जाऊँ , जिन गुण सम्पत्ति हो प्राप्त।
विशद ज्ञान को पाकर भगवन्, मैं भी बन जाऊँ प्रभु आप्तङ्क 3ङ्क

●●●

श्री समाधि भक्ति

अपनी आतम के संवेदन, रूप सुलक्षण से संयुक्त।
श्रुतज्ञान रूपी चक्षु से, देखूँ मैं होकर के युक्तङ्क
केवलज्ञान रूपी नेत्रों से, मण्डित हो तुम हे जिनदेव!
विशद भाव से तव चरणों में, ध्यान हमारा रहे सदैवङ्क 1ङ्क

शास्त्राभ्यास जिनेन्द्र की स्तुति, सज्जन संगति रहे सदा।
संयमियों के गुण की चर्चा, दोष कथन में मौन सदाङ्क
जीवों में हितमित प्रियवाणी, आत्म तत्व के भाव जगे।
जब तक मोक्ष प्राप्त न होवे, उक्त क्रिया में ध्यान लगेङ्क 2ङ्क

जिनवर कथित मार्ग में श्रद्धा, अन्य मार्ग से रहूँ विरक्त।
जिनवर के गुण की स्तुति में, भाव रहें मेरे आसक्तङ्क
निष्कलंक निर्मल जिनवाणी, पढ़ने में मम् भाव लगें।
भव-भव में जिन भक्ति करने, के मेरे शुभ भाव जगेंङ्क 3ङ्क

हो सन्यास मरण भी मेरा, जन्म-जन्म में हे भगवन्!
ऋषी मुनी गणधर आदि के, पादमूल पाऊँ पावनङ्क
श्री जिन की प्रतिमा के दर्शन, करके हो मन में संतोष।
जिन सिद्धांत रूप सागर का, करता रहूँ नित्य जयघोषङ्क 4ङ्क

श्री जिनेन्द्र का वंदन करके, कोटि जन्म का संचित पाप।
चन्द क्षणों की भक्ति से ही, नश जाता है अपनेआपङ्क
जन्म जरा मृत्यु का कारण, भी क्षण में हो जाय विनाश।
शुद्ध चेतना की शक्ति का, हो जाता है पूर्ण विकासङ्क 5ङ्क

बाल्य अवस्था से अब तक का, काल हमारा हे जिनदेव!
कल्प लता सम तव चरणों की, सेवा में बीता है एवङ्क
अब उस सेवा के फल से मैं, अर्चा करूँ मृत्यु के काल।
होय नहीं अवरुद्ध कण्ठ मम्, नाम तुम्हारा जपूँ त्रिकालङ्क 6ङ्क

हे जिनेन्द्र! जब तक हमको भी, प्राप्त नहीं होवे निर्वाण।
तब तक शुद्ध भाव से भगवन्, करता रहूँ नित्य गुणगानङ्क
दोनों चरण आपके मेरे, हृदय कमल में हों आसीन।
तव चरणों में हृदय हमारा, हे जिनेन्द्र! हरदम हो लीनङ्क 7ङ्क

हो कर्त्तव्य परायण श्रावक, उसको श्री जिन की भक्ती।
नरकादि दुर्गतियों से वह, दिलवाती सबको मुक्तीङ्क
करे असीम पुण्य से पूरित, स्वर्गादि जो करे प्रदान।
मोक्ष लक्ष्मी को देने में, है समर्थ करती कल्याणङ्क 8ङ्क

पञ्चमेरु संबंधी जिनको, भाव सहित में करूँ प्रणाम।
पञ्च अरिंजय नाम सहित हैं, पाँच मतिसागर के नामङ्क
पाँच यशोधर नाम के मेरु, सीमन्दर के पांच महान्।
तीर्थंकर जिनका वंदन कर, भाव सहित करता गुणगानङ्क 9ङ्क

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण युत, रत्नत्रय को करूँ नमन्।
वृषभादि चौबिस जिनवर को, भाव सहित मेरा वंदनङ्क
पञ्च परम परमेष्ठी के पद, करता हूँ सम्यक् अर्चन।
चारण ऋद्धिधारी मुनिवर, का करता मैं आराधनङ्क 1ङ्क

शुद्ध आत्मा के स्वरूप का, करते जो स्पष्ट कथन।
परम सिद्ध परमेष्ठी को मैं, करता हूँ शत्-शत् वंदनङ्क
समीचीन उत्तम बीजाक्षर, अर्हं का करता श्रद्धान।
इस अक्षर का पूर्ण रूप से, भाव सहित करता हूँ ध्यानङ्क 11ङ्क

अष्ट कर्म से रहित पूर्णतः, मोक्ष लक्ष्मी के आलय।
सम्यक् दर्शन आदि गुण के, कहे गये हैं देवालयङ्क
परम सिद्ध परमेष्ठी जिनको, करता हूँ शत् बार नमन्।
उनके गुण को पाने हेतु, विशद भाव से है वंदनङ्क 12ङ्क

देव विभूति का आकर्षण, मुक्ति श्री का वशीकरण।
पाप अभाव आत्म संबंधी, चऊ गति विपदा उच्चाटनङ्क

कुगति गमन का स्तंभन अरु, करे मोह का सम्मोहन।
पञ्च नमस्कृत अक्षरमय हैं, देवी आराधना का रक्षणङ्क 13ङ्क

काल अनंतानंत में भव की, सन्तति छेदन का कारण।
श्री जिनेन्द्र के चरण कमल का, एक स्मरण मुझे शरणङ्क 14ङ्क

हे जिनेन्द्र! मम् अन्य शरण न, आप ही मेरे लिये शरण।
इसीलिये करुणा करके प्रभु, आप कीजिए मम् रक्षणङ्क 15ङ्क

तीन लोक में नहीं है कोई, रक्षक कोई नहीं शरण।
वीतराग सम भूत भविष्यत, में कोई भी न रक्षणङ्क 16ङ्क

जिनभक्ति-जिनभक्ति जिन की, दिन प्रतिदिन भव-भव में नाथ।
सदा प्राप्त हो सदा प्राप्त हो, सदा प्राप्त तव पद में माथङ्क 17ङ्क

करूँ याचना चरण कमल में, भक्ति की मैं हे जिनदेव!
बारंबार याचना करता, तव पद भक्ति पाऊँ सदैवङ्क 18ङ्क

श्री जिनेन्द्र की स्तुति करने, से विघ्नों का होता नाश।
भूत शाकिनी सर्पादि का, विष होता है पूर्ण विनाशङ्क 19ङ्क

अञ्चलिका

हे भगवन्! हम इच्छा करते, परम समाधि भक्ती का।
कायोत्सर्ग किया जो हमने, सर्व दोष से मुक्ती काङ्क
रत्नत्रय का करें निरूपण, परम शुद्ध आतम का ध्यान।
लक्षण श्रेष्ठ कहे जिनवर के, परम समाधि के स्थानङ्क

ध्यान रूप आतम विशुद्ध की, अर्चा पूजा करूँ नमन्।
दुःख कर्म का क्षय हो बोधि, और समाधि सहित मरणङ्क
नित्य अर्चना पूजा वन्दन, दुःख कर्म क्षय हो हे आप्त!
बोधि समाधि सुगति गमन हो, जिनगुण सम्पत्ति हो संप्राप्तङ्क

●●●

श्री नंदीश्वर भक्ति

इन्द्रों के मुकटों के तट पर, लगी हुई मणियों से श्रेष्ठ।
किरण समूह रूप जलधारा से, प्रक्षालित चरण यथेष्ठङ्क
तीन योग की शुद्धि पूर्वक, तीन लोक के शुभ मनहार।
भाव सहित वंदन करता हूँ, जिन मंदिर प्रतिमा सुखकारङ्क 1ङ्क

ज्ञानावरण आदि कर्मों की, रज का करने हेतु नाश।
पृथ्वीतल तक शीष झुकाकर, करते नमन् चरण के दासङ्क
वीतराग जिन बिम्ब जिनालय, अविनाशी अनुपम अविकार।
शीष झुकाकर वन्दन करते, भाव सहित हम बारम्बारङ्क2ङ्क

भवनवासि देवों के भवनों, में स्थित अति दीप्तिमान।
सप्तकोटि अरु लाख बहत्तर, चैत्यालय हैं आभावानङ्क
वीतराग जिन बिम्ब जिनालय, अविनाशी अनुपम अविकार।
शीष झुकाकर वन्दन करते, भाव सहित हम बारम्बारङ्क3ङ्क

त्रिभुवन जन के मन नयनों को, प्रिय असंख्य गुण से संयुक्त।
नमस्कृत्य व्यन्तर देवों से, तीन लोक के स्वामी मुक्तङ्क
अकृत्रिम चैत्यालय सुन्दर, अनुपम अविनाशी अविकार।
शीष झुकाकर वन्दन करते, भाव सहित हम बारम्बारङ्क4ङ्क

ज्योतिष देवों के विमान शुभ, लोक में जितने रहे महान्।
उतने में कृत्रिम चैत्यालय, उनमें होते शोभावानङ्क
ज्योतिर्लोक के अधी देवता, गगन मध्य फैले मनहार।
भाव सहित वन्दन करते हैं, प्रभु चरणों में बारम्बारङ्क5ङ्क

भेद अनेक कल्पवासी के, सोलह स्वर्ग में रहते देव।
कल्पातीत अनल्प रहे शुभ, पाप मुक्त चैत्यालय एवङ्क

लख चौरासी सहस सतानवे, देवों के शुभ रहे विमान।
चैत्यालय अकृत्रिम उतने, उनमें होते शोभावानङ्क6ङ्क

जिनके ज्ञानादर्श में दिखता, लोकालोक भेद से युक्त।
कर्म घातिया नाश किए हैं, कर्मों से जो रहे विमुक्तङ्क
चार सौ अट्ठावन चैत्यालय, मनुष लोक में रहे महान्।
उनका वन्दन करने वाले, अल्पकाल में हो भगवानङ्क7ङ्क

तीन लोक के देवों द्वारा, पूजित वीतराग जिन बिम्ब।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय शुभ, वीतराग जिन के प्रतिबिम्बङ्क
नव को नव से गुणित किए पर, इक्यासी चऊ शतक समेत।
सत्तानवे को सहस गुणाकर, संख्या पावे फल के हेतङ्क8ङ्क

पञ्च शून्य युत छप्पन संख्या, अष्ट कोड़ि जिसका विस्तार।
आठ कोड़ि अरु लाख सुछप्पन, सहस सत्तानवे अरु सौचारङ्क
इक्यासी है अधिक योग सब, जिन चैत्यालय हैं मनहार।
उनमें स्थित जिन बिम्बों को, वन्दन करते बारम्बारङ्क9ङ्क

रुचक गिरिवक्षार सुकुण्डल, मानुषोत्तर विजयार्ध महान्।
इष्वाकार कुलाचल कुरु द्वय, पर चैत्यालय हैं भगवानङ्क
तीन सौ छब्बीस चैत्यालय कुल, अकृत्रिम हैं शुभ मनहार।
उनमें स्थित जिन बिम्बों को, वन्दन करते बारम्बारङ्क 1ङ्क

नंदीश्वर सागर से वेष्टित, नंदीश्वर है द्वीप महान्।
पृथ्वीतल को शोभित करता, अति रमणीय है शोभावानङ्क
शशिकर निकर समान सघन यश, चतुर्दिशा मे फैल रहा।
भूमण्डल को व्याप्त किया है, कीर्ति फैली पूर्ण अहाङ्क 11ङ्क

पर्वत के ऊपर प्रतिदिश में, मध्य में अञ्जन गिरि महान्।
उसके चतुर्दिशा में दधिमुख, रतिकर भी हैं शोभावानङ्क

तेरह मुख्य रहे यह पर्वत, उनके ऊपर शुभ मनहार।
इन्द्रों से पूजित चैत्यालय, तेरह जानो मंगलकारङ्क 12ङ्क

माह अषाढ़ कार्तिक फाल्गुन, शुक्ल पक्ष जब होय महान्।
तिथि अष्टमी से लेकर के, आठ दिनों करते गुण गानङ्क
सौधर्म इन्द्र को आदि करके, सभी इन्द्र आते हैं साथ।
भक्ति भाव से वन्दन करते, चरणों झुका रहे सब माथङ्क 13ङ्क

चैत्यालयों में नंदीश्वर के, प्रचुर दिव्य अक्षत शुभ गंध।
भांति-भांति के पुष्प लिए हैं, खेकर धूप होय आनन्दङ्क
उपमातीत सु जिन प्रतिमाएँ, सर्व जगत् में मंगलकार।
योग्य महामय नामक पूजा, कर नमन करें शत् बारङ्क 14ङ्क

वर्णन क्या हम करें अलग से, सौधर्म इन्द्र करे अभिषेक।
चन्द्र समान पूर्ण मासी के, यश फैले जग में कई एकङ्क
ऐसे अन्य इन्द्र कई आकर, सहयोग भाव धारण करते।
भक्ति का फल पाते हैं वह, कर्म कालिमा को हरतेङ्क 15ङ्क

उज्ज्वल गुण से युक्त देवियाँ, उज्ज्वलता को मात करें।
मंगल द्रव्यों को धारण कर, भक्ति की बरसात करेंङ्क
करें नृत्य अप्सराएँ मिलकर, अन्य देव गण रहे महान्।
देख रहे अभिषेक प्रभु का, भाव सहित करते गुणगानङ्क 16ङ्क

इन्द्रों द्वारा वैभव संयुत, पूजा होती महत् महान्।
बृहस्पति भी वचनों से अपने, उसका न कर सके बखानङ्क
उक्त महामह पूजन की शुभ, स्तुति करने हेतु प्रधान।
किस मानव की शक्ति है जो, उसका करे पूर्ण गुण गानङ्क 17ङ्क

चूर्ण सुगन्धित लेकर जिसने, पूजा की अभिषेक समेत।
हर्ष भाव से विकृत दृष्टि, हुई रहे फिर भी वह चेतङ्क

पूजा करके इन्द्र भाव से, होकर के भक्ति में लीन।
चैत्यालयों की नंदीश्वर के, परिक्रमा करें भाव से तीनङ्क 18ङ्क

पञ्च मेरु सम्बन्धी श्री युत, भद्र साल नन्दन वन श्रेष्ठ।
और सौमनस पाण्डुक वन की, शोभा अनुपम रही यथेष्ठङ्क
चारों वन में चार-चार शुभ, चैत्यालय हैं मंगलकार।
देकर प्रथम परिक्रमा उनकी, नमन् करें वह बारम्बारङ्क 19ङ्क

करते हैं अभिषेक वहाँ भी, पूजा करते हैं मनहार।
देव सभी अपनी क्षमता से, पुण्य कमावें मंगलकारङ्क
इन्द्र सभी भक्ति करके शुभ, जाते हैं अपने स्थान।
भाव सहित हम वन्दन करते, और करें उनका गुणगानङ्क 2ङ्क

अकृत्रिम चैत्यालय पावन, अकृत्रिम तोरण से युक्त।
चतुर्दिशा में वन से वेष्टित, याग वृक्ष आदि संयुक्तङ्क
मानस्तंभ में ध्वज पंक्ति शुभ, दश प्रकार होती मनहार।
तीन परिधि वाले मण्डप हैं, गोपुर हैं चउदिश में चारङ्क 21ङ्क

चतुर शिल्पियों से कल्पित हैं, रचनाएँ संकल्पातीत।
होता है अभिषेक सुदर्शन, क्रीड़ाएँ हैं उपमातीतङ्क
बने हुए गृह नाटक हेतु, अनुपम हैं जो शुभ अविकार।
बजता है संगीत वहाँ पर, अतिशय कारी मंगलकारङ्क 22ङ्क

विकसित हुए कमल पुष्पों से, शरद ऋतु से शुभ आकाश।
चन्द्र और ग्रह ताराओं से, मानों होता दिव्य प्रकाशङ्क
पुष्प कारिणी और वापिका, शुभम् दीर्घिका है मनहार।
इत्यादि से भरे जलाशय, शोभित होते हैं सुखकारङ्क23ङ्क

हैं प्रत्येक द्रव्य इक आठ, शत् झारी दर्पण कलश महान्।
पंखा ध्वज स्वस्तिक छत्र त्रय, चंवर ढौरते देव प्रधानङ्क

विस्मयकारी गुण से संयुत, झण-झण शब्द करें मनहार।
घंटा बजते मध्यम ध्वनि से, सारे जग में मंगलकारङ्क 24ङ्क

गंधकुटी में सिंहासन पर, दिखते हैं सुन्दर मनहार।
विविध भांति के वैभव संयुत, श्री जिनेन्द्र हैं मंगलकारङ्क
स्वर्णमयी जिन चैत्यालय शुभ, अकृत्रिम हैं शोभावान।
नित्य वन्दना करते हैं जो, उनका हो जाता कल्याणङ्क 25ङ्क

पञ्च शतक ऊँची प्रतिमाएँ, चैत्यालयों में हैं मनहार।
मणि स्वर्ण चाँदी से निर्मित, सर्व जगत् में मंगलकारङ्क
कोटि सूर्य की आभा से भी, प्रभावान है देह महान्।
उपमा नहीं जगत् में कोई, उनका कौन करे गुणगानङ्क 26ङ्क

उन जिन भवनों को वन्दन है, जो हैं जैन धर्म की शान।
पूर्वादि प्रत्येक दिशा में, यश अरु तेज की भांति महान्ङ्क
सूर्य समान पाप के नाशक, अतिशयकारी शोभावान।
जितने जो मंदिर हैं उनको, नमन् करूँ करके गुणगानङ्क 27ङ्क

भूत भविष्यत् वर्तमान के, एक सौ सत्तर हों तीर्थेश।
धर्म प्रिय जो क्षेत्र लोक में, आर्य खण्ड में रहे विशेषङ्क
भव भय भ्रमण मैटने हेतु, विनय सहित मैं करूँ नमन्।
कर्म नाशकर अपने सारे, सिद्ध शिला पर करूँ गमनङ्क 28ङ्क

इस हुण्डावसर्पिणी के भी, काल में तीर्थ प्रवर्तनकार।
ऋषभ देव स्वामी कर्मों के, कृषि आदि षट् के कर्त्तारङ्क
अष्टापद गिरि के मस्तक पर, पद्मासन से कीन्हें ध्यान।
पाप कर्म का नाश किए, प्रभु सिद्ध शिला पर किए प्रयाणङ्क 29ङ्क

शुभ गर्भादि कल्याणक की, पूजाओं में सह परिवार।
शत् इन्द्रों से वंदित जग में, वासुपूज्य जिन मंगलकारङ्क

नाश किए जो सभी आपदा, पाप कर्म भी किए विनाश।
चम्पापुर से परम मोक्ष पद, पाकर कीन्हें आत्म प्रकाशङ्क 3ङ्क

प्रमुदित चित्त से जिनकी पूजा, करते रहे कृष्ण बलदेव।
अरु कषाय शत्रु को जीता, ऐसे हुए नेमि जिनदेवङ्क
ऊर्जयन्त गिरि की चोटी है, तीन लोक में सर्व महान्।
तीन लोक के शिखामणि हो, पाया प्रभु ने पद निर्वाणङ्क 31ङ्क

सिद्धि वृद्धि तप तेज पूर्ण हैं, दिव्य ध्वनि जिनकी मनहार।
गुण अनन्त के धारी अन्तिम, महावीर हैं मंगलकारङ्क
पावापुर में श्रेष्ठ सरोवर, मध्य में स्थित शोभावान।
मुक्ति स्थल महावीर का, जहाँ से पाया पद निर्वाणङ्क 32ङ्क

कीर्ति धारण करने वाले, शेष रहे जो बीस जिनेश।
मत्त हाथियों ने घेरा है, जग में है विस्तीर्ण विशेषङ्क
गिरि सम्मेद शिखर के ऊपर, इच्छित सिद्धि को पाए।
चरण वन्दना करके उनकी, विशद भाव से गुण गाएङ्क 33ङ्क

पूर्ण मतों के ज्ञाता गणधर, अन्य केवली जो सामान्य।
पर्वत तल पर ऊपर नीचे, नदी गुफा वन उपवन मान्यङ्क
वृक्षों की शाखा बिल सागर, अग्नि की ज्वाला में संत।
निज आतम का ध्यान लगाकर, करते हैं कर्मों का अंतङ्क 34ङ्क

इन्द्र अती भक्ति से स्तुति, करते जिनके चरण नमन्।
मोक्ष गति के कारण अनुपम, मोक्ष मार्ग पर करें गमनङ्क
ये सब धर्म कर्म को स्वीकृत, करने वाले मंगल रूप।
उनका वन्दन करके पाऊँ, कर्म नाश कर जिन स्वरूपङ्क 35ङ्क

श्री जिनवर जिन प्रतिमाएँ शुभ, पावन जिन मंदिर मनहार।
उनकी है निर्वाण भूमियाँ, सर्व जगत् में मंगलकारङ्क

वे जिनेन्द्र उनकी प्रतिमाएँ, जिन मंदिर जग में सुखकार।
भव्यों को निर्वाण सुस्थल, क्षय कारक होवें संसारङ्क 36ङ्क

उत्तम यश के पुञ्ज रहे, सर्वज्ञ देव के जग हितकार।
नित्य पढ़े स्त्रोत यदि जो, तिय संध्याओं में सुखकारङ्क
श्रुत के धारक गणधर आदि, सब मुनियों से पूज्य महान्।
शीघ्र मोक्ष फल को पाकर के, हो जाते हैं वह भगवानङ्क 37ङ्क

नित्य पसीना रहित मूत्र मल, रक्त है जिनका क्षीर समान।
वज्र वृषभ नाराच संहनन, समचतुस्त्र पाया संस्थानङ्क
है सुगन्ध मय देह सुपावन, रूप सुसुन्दर रहा महान्।
एक हजार आठ लक्षण के, धारी हैं सद्गुण की खानङ्क38ङ्क

मधुर वचन हितकारी प्रिय शुभ, बल अतुल्य जिसका न पार।
यह प्रसिद्ध अतिशय पाए दश, प्रभु के तन में मंगलकारङ्क
अन्य अपरिमित गुण पाए शुभ, गणना नहीं हैं संख्यातीत।
तीर्थंकर प्रभु के शरीर में, श्रद्धा धारण करो विनीतङ्क 39ङ्क

कोष चार सौ तक सुभिक्षता, होता है आकाश गमन।
बन्ध न होवे किसी जीव का, चतुर्दिशा में हो दर्शनङ्क
पूर्ण अन्त हो उपसर्गों का, करते नहीं हैं कवलाहार।
सर्व जगत की विद्याओं पर, पाया है जिनने अधिकारङ्क 4ङ्क

छाया पड़ती नहीं देह की, बढ़ते न नख केश कभी।
नेत्रों के न पलक झपकते, ज्ञान के अतिशय रहे सभीङ्क
कर्म घातिया के क्षय होते, अतिशय पाते हैं भगवन्।
स्वाभाविक गुण पावें उत्तम, अतिशय दश पावें पावनङ्क 41ङ्क

अर्धमागधी भाषा पावन, सर्व प्राणियों की हितकार।
सर्व जगत के जीवों में हो, मैत्री भाव का शुभ-संचारङ्क

छह ऋतुओं के फल के गुच्छे, पत्ते और खिलें शुभ फूल।
वृक्ष सुशोभित होते पावन, मंगलकारी हैं अनुकूलङ्क 42ङ्क

पृथ्वी रत्न मई हो सुन्दर, निर्मल होती कांच समान।
हो अनुकूल गमन वायु का, मानो करती हो सम्मानङ्क
जब जीवों के अन्तर मन में, हो जाता है परमानन्द।
दुरित कर्म का आश्रय उनके, हो जाता है भाई बन्दङ्क 43ङ्क

परम सुगन्धित वायु पवन, से आच्छादित हो भू भाग।
इक योजन पर्यन्त पूर्णतः, नहीं रहे दुर्गन्ध विभागङ्क
धूली कंटक तृण आदि अरु, नीर रेत पाषाण विहीन।
स्वर्गों के देवेन्द्र वहाँ की, करते हैं बाधाएँ क्षीणङ्क 44ङ्क

उसके बाद इन्द्र की आज्ञा, पाकर आता देव कुमार।
स्तनित कुमार जाति के हैं जो, सुन्दर दिखते हैं मनहारङ्क
विद्युत माला के विलाशयुत, हास्य विनोद वेश धारी।
परम सुगंधित गंधयुक्त जल, की वर्षा करता भारीङ्क 45

श्री विहार में पद के नीचे, पद्मराग मणि श्रेष्ठ रहा।
केसर युक्त अतुल सुखकारी, स्वर्ण पत्र संयुक्त कहाङ्क
एक कमल रहता ऐसे ही, सप्त कमल आगे मानो।
सप्त कमल चरणों के तल में, पन्द्रह का वर्ग कमल जानोङ्क 46ङ्क

तीन लोक के नाथ जिनेश्वर, के वैभव को देख रही।
पृथ्वी भाव विभोर होय ज्यों, विविध फलों का भार सहीङ्क
झुकी हुई ज्यों शालि ब्रीहि, धान्य आदि धारण करती।
करती है रोमांच प्राप्त जो, शायद ज्यों वर्षा करतीङ्क 47ङ्क

शरद ऋतु के काल में निर्मल, सरवर सम जो होवे खास।
रहित धूलि आदि मल से शुभ, शोभित होता है आकाशङ्क

अन्धकार को शीघ्र छोड़तीं, सर्व दिशाएँ हों अविकार।
धूलि आदि मल की हानि को, शीघ्र प्रकट करती मनहारङ्क 48ङ्क

इन्द्रों की आज्ञा से सारे, देवादि भी करें विहार।
आओ-आओ शीघ्र यहाँ पर, करते हैं वह सभी पुकारङ्क
ज्योतिष व्यन्तर वैमानिक सब, देवों का करते आह्वान।
चारों ओर बुलावा देकर, करते हैं प्रभु का सम्मानङ्क 49ङ्क

एक हजार आरों से शोभित, अनुपम रहा जो कांतिमान।
मल से रहित महारत्नों की, किरणों से है व्याप्त महान्ङ्क
सहस रश्मि की कान्ती को भी, तिरस्कृत करता है मनहार।
धर्म चक्र आगे चलता है, सर्व जगत् में मंगलकारङ्क 5ङ्क

श्री विहार में इसी तरह से, मंगल द्रव्य रहें शुभ साथ।
दर्पण आदि अष्ट कहीं जो, उनके स्वामी हैं जिननाथङ्क
भक्ति राग में रंगे हुये सब, नृत्य गान कर गाते गीत।
देव सभी अतिशय करते हैं, समवशरण में उपमातीतङ्क 51ङ्क

दिव्य रत्न वैडूर्यमणि से, निर्मित शाखाएँ मृदु पत्र।
कोमल कोंपल से शोभित हैं, उप शाखाएँ भी सर्वत्रङ्क
हरित मणि से निर्मित पत्रों, की छाया है सघन महान्।
शोक निवारी तरु अशोक है, शोभा युक्त रही पहचानङ्क 52ङ्क

मद से हो उन्मत भ्रमर जो, करते हैं अतिशय गुंजार।
कुन्द कुमुद अरु नील कमल शुभ, श्वेत कमल शुभ है मंदारङ्क
बकुल मालती आदि पुष्पों, से आच्छादित है आकाश।
पुष्प वृष्टि होने से लगता, मानो आया हो मधुमासङ्क 53ङ्क

कड़ा स्वर्णमय और मेखला, बाजूबन्द कर्ण कुण्डल।
कमर करधनी आदि अनेकों, आभूषण शोभित मंगलङ्क
नेत्र कमल दल के समान शुभ, नेत्रों वाले यक्ष महान्।
लीला पूर्वक चंवर युगल जो, ढौर रहे हैं प्रभु पद आनङ्क 54ङ्क

रहित आवरण अकस्मात् ही, उदित हुए हों ज्यों इक साथ।
सूर्य हजारों सम प्रकाशमय, शोभित होवें जग के नाथङ्क
भेद मिटाए दिन रात्रि का, भामण्डल अति शोभावान।
सप्त भवों का दर्शायक है, करता है प्रभु का सम्मानङ्क 55ङ्क

प्रबल पवन के घात से क्षोभित, ज्यों समुद्र के शब्द समान।
है गम्भीर श्रेष्ठ स्वर वाला, ज्यों प्रशस्त वीणा का गानङ्क
श्रेष्ठ वासुरी आदि उत्तम, बाद्यो सहित दुन्दुभि श्रेष्ठ।
बार-बार गम्भीर शब्द जो, करे ताल के साथ यथेष्ठङ्क 56ङ्क

तीन चन्द्रमाओं के जैसा, तीन लोक के चिन्ह स्वरूप।
अनुपम मुक्ता मणि की लड़ियों, से शोभित है सुन्दर रूपङ्क
बहुत विशाल नील मणियों से, शुभ निर्मित है दण्ड महान्।
अति मनोज्ञ आभा से संयुत , तीन छत्र हैं शोभावानङ्क57ङ्क

कर्ण हृदय को हरने वाली, दिव्य ध्वनि अनुपम गम्भीर।
चार कोश तक चतुर्दिशा में, श्रवण करें धारण कर धीरङ्क
मेघ पटल जल से पूरित ज्यों, गर्जन करता अपरम्पार।
सर्व दिशाओं के अन्तर को, व्याप्त करे होकर अविकारङ्क 58ङ्क

ज्यों दैदीप्यमान किरणों के, रत्नों की किरणों से युक्त।
इन्द्र धनुष की कांति वाले, अनुपम हैं आभा संयुक्तङ्क

स्फटिक मणि की शिला से, निर्मित सिंहासन सुन्दर मनहार।
सिंहों का शुभ है प्रतीक जो, समवशरण अति मंगलकारङ्क 59ङ्क

चौतिश अतिशय रहे श्रेष्ठ गुण, इस जग में जिनके सुखकार।
अष्ट लक्ष्मियाँ प्रातिहार्य की, इन गुण का पाए आधारङ्क
अन्य महत् गुण से संयुक्त हैं, श्री जिनेन्द्र देवाधिदेव।
तीन लोक के नाथ श्री जिन, अर्हन्तों को नमन् सदैवङ्क 6ङ्क

(अर्हन्त की महिमा)

पृथ्वी से आकाश में जाकर, धनुष पञ्च हज्जार प्रमाणङ्क
बीस हजार सीढ़ियों के भी, ऊपर श्रीजिन का स्थानङ्क
धन कुबेर ने समवशरण की, सभा का कीन्हा है विस्तार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 1ङ्क

धूलि साल के बाद वेदिका, वेदी के भी आगे साल।
वेदी साल अरु वेदी रथ के, बाद में शोभित होता सालङ्क
क्रमशः वेदी शोभित होती, आगे इसी तरह विस्तार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 2ङ्क

चैत्यालय प्रासाद खातिका, लता और पावन केतु।
कल्पवृक्ष गृह सप्त भूमियाँ, बारह सभा प्रवचन हेतु।
इसके ऊपर तीन पीठिका, शोभित होती हैं मनहार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 3ङ्क

गरुड़ और कमलांबर माला, हंस मृगेन्द्र मयूर मतंग।
गोपति रथ से चिन्हित ध्वज दश, लहराती होके निःसंगङ्क
विजय पताका समवशरण की, फहराती है मंगलकार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 4ङ्क

मुनी कल्प वनिता व्रतिका, भ-भौम नाग स्त्री सारी।
भवन भौम भ कल्पदेव सब, होते हैं ऋद्धीधारीङ्क
नर पशु भी कोठों में स्थित, शीष झुकाते बारम्बार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत-शत् बारङ्क 5ङ्क

कल्पवृक्ष दुन्दुभि सिंहासन, भामण्डल, चाँवर तिय छत्र।
पुष्प वृष्टि अरु दिव्य ध्वनियुत, प्रातिहार्य वसु शुभ सर्वत्रङ्क
समवशरण शोभित होता है, सम्यक् दर्शन काआधार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 6ङ्क

पंखा झारी कलश सुदर्पण, सुप्रतीक है शोभामान।
छत्र-त्रय ध्वज चामर सुंदर, इनका कौन करे गुणगानङ्क
अष्ट शतक प्रत्येक सुशोभित, द्रव्य विराजित मंगलकार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 7ङ्क

निधी मार्ग स्तंभ सुगौपुर, वापी चैत्य नाट्यशाला।
चैत्य स्तूप तालाब धूप घट, तोरण शुभ फूलों वालाङ्क
क्रीडापर्वत तरुवर अनुपम, जिनगृह का सुंदर श्रृंगार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 8ङ्क

सेना पति घोड़ा अरु हाथी, स्त्री और कांकिड़ी रत्न।
कारीगर अरु हर्म्यपति असि, दण्ड छत्र चूड़ामणि रत्नङ्क
चक्र सुदर्शन और पुरोहित, के स्वामी झुकते चरणार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 9ङ्क

पद्म काल अरु महाकाल शुभ, सर्वरत्न पाण्डु पिंगल।
शंख और नैसर्प सुमाणव, नव निधियाँ होतीं मंगलङ्क

इनके स्वामी चरणों झुकते, इन सबके हो तारणहार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 1ङ्क

घातिकर्म का नाश किया है, चौबिस अतिशय भी पाए।
अनंत चतुष्टय सहित हुए हैं, प्रातिहार्य वसु उपजाएङ्क
कल्याणक पाए पांचों ही, करो 'विशद' हमको भव पार।
तीन लोक के नाथ आपके, चरणों वंदन शत्-शत् बारङ्क 11ङ्क

अञ्चलिका

नंदीश्वर भक्ति का मैंने, कार्योत्सर्ग किया भगवन्।
तत्सम्बन्धी आलोचन कर के, चरणों में करता वन्दनङ्क
नन्दीश्वर की चतुर्दिशा, विदिशा में अंजन गिरि महान्।
दधि मुख रतिकर गिरि के ऊपर, जिन प्रतिमाओं का गुणगानङ्क

भवन विमान ज्योतिष व्यन्तर के, देव सभी परिवार समेत।
दिव्य सुगन्धित जल चन्दन अरु, अक्षत पुष्प पूजा के हेतङ्क
चरुवर दीप धूप फल लेकर, अष्टम से पूनम पर्यन्त।
अषाढ़ माह फाल्गुन कार्तिक में, नन्दीश्वर में जिन भगवन्तङ्क

उनकी नित्य अर्चना पूजा, वन्दन करते और नमन।
नंदीश्वर के महापर्व का, महामहोत्सव करें चमनङ्क
मैं भी यहाँ से उन चैत्यों की, पूजा अर्चा करूँ नमन।
दुःख कर्म का क्षय रत्नत्रय, प्राप्त होय मम सुगति गमनङ्क

दोहा – मरण समाधि पायकर, पाऊ शिव का द्वार।
जिन गुण की सम्पत्ति मिले, होय आत्म उद्धारङ्क

●●●

श्री निर्वाण भक्ति

जो देवेन्द्र नरेन्द्र नागपति, विद्याधर धनपति के साथ।
भूत और यक्षों के स्वामी, पूजें चरण झुकावें माथङ्क
अचल अनामय सुख अतुल्यमय, मोक्ष सुनिर्मल उपमातीत।
सम्यक् रीति से पाए हैं, महावीर इन्द्रिय मन जीतङ्क 1ङ्क

तीन लोक के श्रेष्ठ गुरु हैं, सब प्रकार से जो निर्दोष।
महावीर के पद का वन्दन, भविजन को देवे सन्तोषङ्क
गर्भादि कल्याणक पांचों, अति दुर्लभ से हुए महान्।
उन श्री वीर प्रभु की स्तुति, करके करते हैं गुणगानङ्क 2ङ्क

पुष्पोत्तर का है स्वामी जो, महावीर का जीव महान।
षष्ठी शुक्ल अषाढ़ माह को, छोड़ दिया था स्वर्ग विमानङ्क
हस्त और उत्तर नक्षत्र के, मध्य में था शुभ चन्द्र विमान।
स्वर्ग सुखों को भोगकर आए, इस पृथ्वी पर श्री भगवानङ्क 3ङ्क

भारत वर्ष में शुभ विदेह के, नगर कुण्डलपुर रहा महान्।
सोलह स्वप्न दिखाकर पावन, स्वर्ग लोक से किया प्रयाणङ्क
प्रियकारिणी देवी माता, नृप सिद्धारथ के दरबार।
जन्म लिया था प्रभु ने आकर, जग में हुआ था मंगलकारङ्क 4ङ्क

चैत मास के शुक्ल पक्ष में, तेरस का दिन रहा महान्।
शुभ नक्षत्र उत्तरा फाल्गुन, चंद्रयोग शुभ रहा प्रधानङ्क
ग्रह सुसौम्य अपने-अपने शुभ में, स्थित थे उच्च स्थान।
ज्योतिष के अनुसार लग्न शुभ, करते हैं यह शास्त्र बखानङ्क 5ङ्क

हस्त नक्षत्र पर रहा चन्द्रमा, चैत की ज्योत्स्ना मनहार।
शुभ बेला में महवीर का, जन्म हुआ था मंगलकारङ्क

चतुर्दशी को प्रात:काल में, इन्द्र और देवेन्द्र अनेक।
रत्न मई कलशों के द्वारा, करते मेरु पर अभिषेकङ्क 6ङ्क

गुण अनंत की राशि थे वह, वर्धमान स्वामी महाराज।
तीस वर्ष का काल बिताया, कुमार अवस्था में युवराजङ्क
देवों द्वारा स्वर्ग लोक के, भोग भोगते रहे महान्।
सहसा वह वैराग्य प्राप्त कर, दूजे दिन कर दिए प्रयाणङ्क 7ङ्क

विविध भांति चित्रों से चित्रित, ऊँचे-ऊँचे शिखर विशाल।
मणि विचित्र से भूषित अनुपम, विविध भांति रत्नों का जालङ्क
चन्द्रप्रभा नामक शुभ सुन्दर, रही पालकी मंगलकार।
उस पर आरोहण करके प्रभु, कुण्डलपुर से किए विहारङ्क 8ङ्क

श्रेष्ठ माह मगसिर कृष्णा की, दशमी के शुभ दिन को प्रात:।
हस्तोत्तर नक्षत्र के ऊपर, रहा चन्द्रमा अनुपम भ्रातङ्क
शुभ बेला अपरान्ह काल में, दो उपवास का ले संकल्प।
दीक्षा ले निर्ग्रन्थ जिनेश्वरी, मन के मैटे सभी विकल्पङ्क 9ङ्क

देवों द्वारा पूज्य रहे जो, वर्धमान स्वामी महाराज।
उग्र-उग्र तप के विधान से, बारह वर्ष किए मुनिराजङ्क
ग्राम खेट कर्वट मटम्ब पुर, घोष द्रोण आकर मनहार।
इत्यादि में कर विहार प्रभु, भ्रमण किए हैं संयमधारङ्क 1ङ्क

ऋजुकला सरिता के किनारे, रहा जृम्भिका नामक ग्राम।
अतिशय शोभा से मण्डित शुभ, पावन हैं अनुपम अभिरामङ्क
शाल वृक्ष के नीचे स्थित, शिला पट्ट पर छोड़ा ताज।
दो दिन का उपवास ग्रहण कर, अपरान्ह में बैठ गये मुनिराजङ्क 11ङ्क

माह रहा वैशाख शुक्ल की, दशमी तिथि रही पावन।
हस्तोत्तर नक्षत्र के ऊपर, रहा चन्द्रमा मन भावनङ्क

हो आरूढ़ क्षपक श्रेणी पर, कर्म घातिया किए विनाश।
पाया केवल ज्ञान प्रभु ने, सारे जग में किया प्रकाशङ्क 12ङ्क

केवल ज्ञान विभूति पाकर, वीर प्रभु ने किया विहार।
विपुलाचल वैभार गिरि शुभ, रम्य सुसुन्दर है मनहारङ्क
गौतम स्वामी को आदि कर, चातुर्वण्य मुनि का संघ।
दिव्य देशना सुनी सभी ने, मन में छाई अती उमंगङ्क 13ङ्क

तरु अशोक अरु छत्र सु सुन्दर, दिव्य ध्वनि का मंगल घोष।
सिंहासन अरु दुन्दुभि बाजे, सुनकर हो मन में सन्तोषङ्क
उत्तम चँवर ढुरें भामण्डल, सुमन सुगन्धित की वृष्टि।
अन्य वस्तुएँ दिव्य प्राप्त हों, हर्ष मई होवे सृष्टिङ्क 14ङ्क

विपुलाचल पर, प्रथम देशना, जीवों में सुनने के बाद।
महावीर के दर्शन पाकर, जग में हुआ हर्ष आह्लादङ्क
दश विधि मुनि धर्म का ग्यारह, प्रतिमाएँ श्रावक का धर्म।
तीस वर्ष उपदेश दिए प्रभु, यह मानव का है सत्कर्मङ्क 15ङ्क

केवल ज्ञानी स्नातक मुनि, महावीर परमात्म सकल।
कमलों के वन का समूह शुभ, और वापिकाएँ मंगलङ्क
विविध भांति के तरु समूह से, शोभित पावानगर उद्यान।
कायोत्सर्ग मुद्रा में जाकर, योग निरोध किए भगवानङ्क 16ङ्क

वे भगवान सकल परमातम, कार्तिक कृष्ण पक्ष का अन्त।
स्वाति नक्षत्र काल में कीन्हें, सब अघाति कर्मों का अन्तङ्क
जरा मरण से रहित हुए जो, अक्षय अविनाशी सुखकार।
मोक्ष सुखों में लीन हुए जो, सिद्ध शुद्ध ज्ञानी अविकारङ्क 17ङ्क

तत्पश्चात् वीर जिनवर की, मुक्ती हुई जानकर देव।
आकर शीघ्र चारों निकाय के, वन्दन करें भाव से एवङ्क

चन्दन लाल देव दारु शुभ, लेकर कालगरू महान्ङ्क
लेकर के गौशीर्ष सुगन्धित, किया प्रभु का शुभ सम्मानङ्क 18ङ्क

मुकुट से आग जगाकर के शुभ, देवों के स्वामी ने आन।
सुरभित गंध श्रेष्ठ माला से, जिनवर का तन रहा महान्ङ्क
पूजा कर संस्कार अग्नि का, गणधर भी पूजा के बाद।
देव स्वर्ग आकाश भवन वन, को जाते होकर आजादङ्क 19ङ्क

इस प्रकार महावीर प्रभु से, सम्बन्धित स्तोत्र कभी।
दोनों संध्याओं में पढ़ता, नर होवे या पशु सभीङ्क
उत्तम सुख का भोग करें वह, अन्त में अविनाशी सुख पाय।
शाश्वत है जो मोक्ष महां पद, पाने सिद्ध शिला पर जायङ्क 2ङ्क

जम्बूद्वीप अरु भरत क्षेत्र में, अर्हत् तीर्थंकर गणधर।
श्रुत सर्वसाधुओं केवली, की निर्वाण भूमियों परङ्क
उनकी स्तुति हेतु तत्पर, बुद्धि वाला होकर आज।
मन वचन तन की शुद्धि पूर्वक, नमन करूँ चरणों में आजङ्क 21ङ्क

सहस अठारह शील के स्वामी, हैं महान् आतम वृषभेश।
गिरि कैलाश शिखर के ऊपर, कर्म नाश कीन्हें अवशेषङ्क
परि निर्वाण प्राप्त करके जो, हुए रोग के बन्ध विहीन।
वसुपूज्य सुत वासुपूज्य जिन, सिद्ध हुए निज आतम लीनङ्क 22ङ्क

इन्द्रादि देवों के द्वारा, आतम की करते जो खोज।
अन्य लिंगधारी साधु भी, मोक्ष की इच्छा करते रोजङ्क
अष्ट कर्म का क्षय करकेप्रभु, हुए अयोगी नेमिराजङ्क
ऊर्जयन्त पर्वत से सम्यक्, प्रभु बनाए अपना काजङ्क 23ङ्क

पावापुर के बाह्य क्षेत्र में, कमल कुमुद से व्याप्त विशेष।
उन्नत भूमि मध्य ताल में, भरा हुआ है जल से शेषङ्क

वर्धमान स्वामी है जिनका, सारे जग में नाम प्रसिद्ध।
सब पापों का क्षय करके प्रभु, मुक्त हुए जो बने हैं सिद्धङ्क 24ङ्क

जीत लिया है मोह मल्ल को, ऐसे हैं तीर्थंकर शेष।
ज्ञान रूप रवि की किरणों से, लोक प्रकाशित रहा विशेषङ्क
सम्मेद शिखर पर्वत के ऊपर, सुख अनन्त से हैं जो व्याप्त।
श्रेष्ठ रहा स्थान मोक्ष जो, किया सभी ने उसको प्राप्तङ्क 25ङ्क

प्रथम तीर्थंकर वृषभ देव ने, चौदह दिन का योग निरोध।
वर्धमान जिनद्वय उपवासी, योग रोधकर पाए बोधङ्क
शेष सभी तीर्थंकर जिन ने, एक माह का योग निरोध।
कर्म बन्ध के सुदृढ़ जाल को, नाश किया फिर पाए बोधङ्क 26ङ्क

वचनों की स्तुति मई पुष्पों, से गूँथित माला सुन्दर।
मानस कर के द्वारा लेकर, चतुर्दिशा में बिखराकरङ्क
जग में जो निर्वाण भूमियाँ, जिनवर की आदर के साथ।
करके तीन परिक्रमा उनकी, झुका रहे हम उनको माथङ्क 27ङ्क

शत्रु पक्ष के नाशक पाण्डव, जो हैं नृप पाण्डव के पुत्र।
शत्रुञ्जय गिरि श्रेष्ठ लोक में, जहाँ से पाए आप अमुत्रङ्क
संग रहित बलभद्र मुनि श्री, तुंगीगिरि से हुए थे मुक्त।
स्वर्ण भद्र सरिता के तट से, शत्रुञ्जय मुनि हुए विमुक्तङ्क 28ङ्क

कुण्डल गिरि प्रकृष्ट द्रोणगिरि, मुक्तागिरि पर्वत वैभार।
उसके तल में सिद्धवर कूट है, वहाँ से पाए भव का पारङ्क
श्रमण गिरि ही स्वर्ण गिरि है, बालाहक है विपुलाचल।
धर्म प्रकाशित करने वाला, पोदनपुर अरु विन्ध्याचलङ्क 29ङ्क

अति प्रसिद्ध गिरि रही हिमालय, गजपंथा है दण्डाकार।
सह्याचल वंशस्थल गिरि पर, साधू किए कर्म क्षयकारङ्क

उत्तम सिद्ध गति को पाये, हैं प्रसिद्ध वे सब स्थान।
हम भी कर्म नाश कर मुक्ति, पाएँ हे प्रभु! दो वरदानङ्क 3ङ्क

जिस प्रकार आटा स्वभाव से, स्वयं आप ही रहा मधुर।
गन्ना के रस से निर्मित गुण, मिलते ही हो मिष्ठ प्रखरङ्क
पुण्य पुरुष का आश्रय पाकर, पृथ्वीतल पर वह स्थान।
उसी तरह हो जाता पावन, पाए जहाँ प्रभु निर्वानङ्क 31ङ्क

इस प्रकार यह मेरे द्वारा, शुभ निर्वाण भक्ति स्तोत्र।
साम्य भाव को प्राप्त मुनि अरु, तीर्थंकर भक्ति के स्रोत्रङ्क
सप्त भयों के जयी शांत शुभ, तीर्थंकर मुनि के निर्वाण।
शुभ निर्दोष श्रेष्ठ सुख मुझको, अतिशीघ्र वह करें प्रदानङ्क 32ङ्क

(क्षेपक काव्य)

सब पापों से मुक्त रहे जो, जो हैं नमस्कार को प्राप्त।
पुरुदेव मुनियों के स्वामी, मोक्ष प्राप्त कर हो गये आप्तङ्क
सब पापों से मुक्त नमस्कृत, मुनियों के स्वामी पुरुदेव।
गिरि कैलाश से मोक्ष पधारे, जगत पूज्य हो गये सदैवङ्क 1ङ्क

नमस्कृत्य हैं इन्द्रों द्वारा, वासुपूज्य जिनवर भगवान।
चम्पापुर से मोक्ष पधारे, उनका कौन करे गुणगानङ्क
श्री गिरनार शिखर है पावन, ऊर्जयन्त है जिसका नाम।
नेमिनाथ जिन मोक्ष पधारे, जिनके चरणों विशद प्रणामङ्क 2ङ्क

वर्धमान स्वामी पावापुर, से पाये हैं पद निर्वाण।
तीन लोक के गुरु शेष सब, बीस तीर्थंकर रहें महान्ङ्क
गिरि सम्मेद शिखर से मुक्ति, पाए सब चौबिस भगवान।
नमस्कार करने वाले हम, सबको देवें पद निर्वाणङ्क 3ङ्क

वृषभ और हाथी घोड़ा शुभ, बंदर चकवा कमल महान।
स्वस्तिक चन्द्र मगर है सुरतरु, शुभ गेंड़ा भैसा सुअर प्रधानङ्क

सेही वज्र हिरण बकरा अरु, मीन कलश कछुआ पहिचान।
नील कमल अरु शंख सर्प, सिंह चौबिस जिनके रहे निशानङ्क 4ङ्क

शांति कुन्थु अरु अरहनाथ जी, कुरुवंश में जन्म लिए।
नेमिनाथ अरु मुनिसुव्रत जी यादव, वंश को धन्य किएङ्क
पार्श्व नाथ जी उग्रवंश में, महावीर का नाथ रहा।
शेष सभी इक्ष्वाकु कुल को, सत्रह का उत्पाद कहाङ्क 5ङ्क

अञ्चलिका

परि निर्वाण भक्ति सम्बन्धी, कायोत्सर्ग किया भगवान।
आलोचन करने की इच्छा, करता हूँ मैं सर्व महानङ्क
वर्तमान अवसर्पिणी में, चौथे काल का अन्त रहा।
तीन वर्ष अरु आठ माह युत, एक पक्ष भी शेष रहाङ्क 1ङ्क

पावापुर में कार्तिक कृष्णा, चतुर्दशी रात्रि के अन्त।
प्रातः काल स्वाति नक्षत्र में, वीर हुए मुक्ति के कन्तङ्क
तीन लोक में भवन व्यन्तर, ज्योतिष कल्पवासी के देव।
दिव्य नीर अरु दिव्य गंध शुभ, अक्षत दिव्य अरु पुष्प सदैवङ्क 2ङ्क

लें नैवेद्य दिव्य शुभ दीपक, दिव्य धूप फल दिव्य महान्।
नित्य अर्चना पूजा वन्दन, वीरनिर्वाण महा कल्याणङ्क
रहते हुए यहां पर मैं भी, क्षेत्र रहे जो भी निर्वाण।
नित्य काल पूजा अर्चा, शुभ वन्दन नमन् करूँ गुणगानङ्क 3ङ्क

दुःखों का मेरे क्षय होवे, कर्मों का क्षय भी हो जाय।
रत्नत्रय की प्राप्ति मुझे हो, सुगति गमन मेरा हो जायङ्क
मरण समाधि को पा जाऊँ, कर्म सभी हो जाएँ समाप्त।
श्री जिनेन्द्र गुण की सम्पत्ति, मुझे शीघ्र हो जावे प्राप्तङ्क 4ङ्क

●●●

दर्शन–पाठ

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

दोहा– जिन दर्शन होता भला, करता पाप विनाश।
स्वर्ग नसैनी है यही, साधन मुक्ति राश।।

जिन दर्शन गुरु वंदना, हरते जग की पीर।
कर्म झरें यों आत्म से, अंजलि पुट ज्यों नीर।
वीतराग छवि देखकर, पद्म राग सम होय।
जन्म–जन्म के कर्म को, दर्शन नाशे सोय।।

जिन सूरज के दर्श से, भव तम होवे नाश।
बोधि चित्त में पद्म सम, चउ दिश होय प्रकाश।।
दर्शन श्रीजिन चन्द्र का, धर्मामृत वर्षाय।
जन्म दाह को नाशता, सुख समुद्र बढ़ जाय।।

(बसन्ततिलका छन्द)

जीवादि तत्व प्रति पादक ज्ञानधारी,
सम्यक्त्व मुख्य वसु गुणमय निर्विकारी।
हे ! शान्त रूप जिनवर देवाधिदेव,
चरणों नमन करें हम जिनके सदैव।
अन्य शरण कोई है नहीं, मुझे शरण एक नाथ,
करो सुरक्षा जिन प्रभु, करुण भाव के साथ।
त्राता नहिं तिहुँ लोक में, त्राता नहीं है कोय,
वीतराग जिनदेव सम, तीन काल में सोय।
प्रतिदिन हमको प्राप्त हो, जिनभक्ति त्रिवार,
सदा–सदा करता रहूँ, भव–भव में हर बार।

चक्रवर्ति पद भी नहीं, दर्शन बिन हे ! नाथ,
दारिदता स्वीकार है, जिन दर्शन के साथ।
जन्म–जन्म कृत पाप भी, कोटि जन्म के होय।
जन्म–जरा अरु मृत्यु भी, दर्शन नाशे सोय।

(बसन्ततिलका छन्द)

देवाधिदेव चरणाम्बुज के सहारे,
दोनों नयन सफल हैं लख के हमारे।
त्रैलोक्य के तिलक यह संसार सागर,
चुल्लू प्रमाण दिखता जिनवर को पाकर।।

पंच महागुरु भक्ति

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

(तर्ज – नित देव मेरी आत्मा...)

कल्याण पाए पाँच अरु, सिर छत्र शोभित तीन हैं।
सुज्ञान–दर्शन ध्यान बल, अनंत सुख में लीन हैं।।
नागेन्द्र सुर नर इन्द्र आदि, पूजते जिनके चरण।
वे देव मंगल हों जगत में, है चरण शत्–शत् नमन।।1।।

ध्यानाग्नि के द्वारा स्वयं ही, कर्म सारे दग्ध कर।
जन्म, मृत्यु अरु जरा का, नगर अति विध्वस्त कर।।
शाश्वत् सुशिव स्थान को भी, कर रहे हैं जो वरण।
वे सिद्ध जिन मंगल जगत् में, है चरण शत्–शत् नमन।।2।।

पालें सुपंचाचार पंच, प्रकार पाप विनाशते।
द्वादश सुअंग समुद्र में, नित सतत् जो अवगाहते।

जो महत् मुक्ति लक्ष्मी के, हेतु करते आचरण।
आचार्य मंगल हैं जगत में, है चरण शत्-शत् नमन।।3।।

संसार रूपी अति भयानक, घोर वन अति सघन है।
नख तीक्ष्ण अरु विकराल बाले, पंच अघ का भ्रमण है।
जो नष्ट करके पाप पथ को, मोक्ष पथ करते वरण।
उवज्झाय पाठक गुरु को मम्, है चरण शत्-शत् नमन।।4।।

तपश्चरण कर उग्रतम अति, काय जिनकी क्षीण है।
शुभधर्म ध्यान अरु शुक्ल ध्यान, में सदा लवलीन हैं।
स्व रूप है अर्हंत जैसा, श्रेष्ठ जग में आचरण।
मोक्ष पथगामी सुसाधु, है चरण शत्-शत् नमन।।5।।

पंच गुरु स्तुत्य हैं अरु, लोक में वंदित कहे।
संसार रूपी सघन बेली, छेदने में रत रहे।
दुष्कर्म ईंधन हीन करने, में 'विशद' जो लीन हैं।
श्री सिद्ध सुख को प्राप्त करने, में बहुत प्रवीण हैं।। 6।।

अर्हंत सिद्धाचार पाठक, साधु मंगलमय महाँ।
ये पंच गुरु मंगल करें मम्, मैं रहूँ चाहे जहाँ।।7।।

अञ्चलिका

हे भगवन ! मैं इच्छा करता, पञ्च महागुरु भक्ति का।
कायोत्सर्ग किया है मैंने, सर्व दोष से मुक्ति का।।
प्रातिहार्य वसु गुण युत अर्हत्, ऊर्ध्वलोक में स्थित सिद्ध।
प्रवचन माता अष्ट सहित हैं, परम पूज्य आचार्य प्रसिद्ध।।1।।

आचारांग आदि श्रुतज्ञानी, उपदेशक उपाध्याय महान।
रत्नत्रय गुण पालन में रत, रहते सर्व साधु गुणवान।।
कर्म दुःख क्षय करूँ समाधि, बोधि सुगति में जाने को।
नित्य वंदना पूजा अर्चा, करते जिन गुण पाने को।।2।।

●●●

सुप्रभात स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

गर्भ जन्म के उत्सव में अरु, दीक्षा ग्रहण महोत्सव में।
अखिल ज्ञान कल्याणक में भी, मोक्ष गमन के उत्सव में।।
भक्ति गीत प्रार्थना मंगल, द्वारा अनुपम अतिशय हो।
जिनपद में हम शीष झुकाते, मम् प्रभात मंगलमय हो।।1।।

नमते देवों के मुकुटों की, मणियों की कांति से युक्त।
चरण कमल द्वय शोभित होते, दुरित कर्म से हुए विमुक्त।।
नाभिनंदन अजितनाथ जिन, संभव जिनकी जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरंतर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।2।।

छत्र त्रय से शोभित होते, ढुरते हुए चँवर संयुक्त।
अभिनंदन जिन सुमतिनाथजी, स्वर्णमयी कांति से युक्त।।
अरुणमणि सम शोभित होते, पद्म प्रभु की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।3।।

कदली दल सम हरित वर्णमय, श्री सुपार्श्व जिनवर का रूप।
ढका हुआ ज्यों बर्फ से हिमगिरि, चन्द्रप्रभु का है स्वरूप।।
श्वेत वर्ण स्फटिक मणीसम, पुष्पदंत की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।4।।

तप्त स्वर्ण सम कांति वाले, शीतलनाथ जिनेन्द्र स्वामी।
दुरित कर्म वसु नष्ट किए हैं, श्रेयांसनाथ मोक्षगामी।।

बंधूक पुष्प सम अरुण मनोहर, वासुपूज्य की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।5।।

उद्दण्ड दर्पमय गज के मद को, विमलनाथ जिन नाश किए।
स्थिर मन करके अनंत जिन, सुख अनंत में वास किए।।
दुष्ट कर्म मल रहित जिनेश्वर, धर्मनाथ की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।6।।

देवामरी वृक्ष के फूलों, जैसे शोभित शांतिनाथ।
दयारूप गुण के आभूषण से, भूषित श्री कुंथुनाथ।।
देवों के भी देव जिनेश्वर, अरहनाथ की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।7।।

मोह मल्ल के मद का भंजन, करते हैं श्री मल्लीनाथ।
सत् शासन युत मुनि सुव्रतजी, झुका रहे हम चरणों माथ।।
त्यागा राज्य संपदा वैभव, नमिनाथ की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।8।।

तरु तमाल के पुष्पों सम है, नेमिनाथ की कांति महान्।
जीते हैं उपसर्ग घोर अति, श्री जिन पार्श्वनाथ भगवान।।
स्याद्वाद सूक्ति मणि दर्पण, वर्द्धमान की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।9।।

धवल नील अरु हरित लाल रंग, पीले में शोभा पाते।
वीतराग अविनाशी सुखमय, गणधरादि जिनको ध्याते।।

एक सो सत्तर एक काल के, तीर्थंकर की जय-जय हो।
ध्यान आपका रहे निरन्तर, मम् प्रभात मंगलमय हो।।10।।

चौपाई

चौबीस तीर्थंकर जिनदेव, सुप्रभात नक्षत्र सुएव।
प्रतिदिन स्तुति मंगल सोय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।11।।

परम सिद्ध ऋषिवर नवदेव, सुप्रभात नक्षत्र सुएव।
श्रेय से खुश करते हैं सोय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।12।।

धर्म के आप महात्मन् एक, करते तीर्थ प्रवर्तन नेक।
भविजन जिससे सुखमय होय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।13।।

जीवों में छाया अज्ञान, देते जिनवर सम्यक् ज्ञान।
तम को जैसे सूरज खोय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।14।।

शुक्ल ध्यान की अग्नि माँय, कर्मों का वन दिये जलाय।
नयन कमल सम जिनके सोय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।15।।

सुनक्षत्र मंगल कल्याण, तीन लोक का करते त्राण।
शासन 'विशद' प्रभु का सोय, मम् प्रभात मंगलमय होय।।16।।

।। इति सुप्रभात ।।

{OgZo A§Yoam| _|, kmZ Ho$ XrnH$ ObmE h¢Ÿ&
Am¡am| H$s amhm| _|, {~N>o eyb ^r hQ>mE h¢Ÿ&&
dh BÝgmZ Zht XodVm h¡, n¥Ïdr naŸ&
Omo AnZr {OÝXJr, namonH$ma Ho$ {bE {~VmE h¢Ÿ&&

नवदेवता स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

तीन लोक में पूज्यनीय हैं, जिन श्रीमान् निर्मल निर्दोष।
दिव्यानन्त चतुष्टय आदिक, प्रातिहार्य वैभव के कोष।।
सत्य स्वरूपी परम आत्मशुभ, श्रीजिन छियालीस गुणधारी।
लोकालोक विलोकी अर्हत्, इस जग में मंगलकारी।।1।।

महित सुरासुर नर से पूजित, नित्य सर्व सुखकर श्रीमान्।
कर्मातीत विशुद्ध काम पद, ज्योति स्वरूपी वसु गुणवान।।
रहित जन्म–मृत्यु अर्ति से, विश्वेषु जिन भयहारी।
सिद्ध श्री लोकाग्र निवासी, इस जग में मंगलकारी।।2।।

पंचाचार परायण निष्पृह, कामादि दोषों से हीन।
विमल ज्ञान चारित्र प्रकाशक, बाह्याभ्यन्तर संग विहीन।।
परं शुद्ध आतम आराधक, जिन अर्हन्त रूपधारी।
जिनाचार नर सुर से पूजित, इस जग में मंगलकारी।।3।।

निर्मल वेद अंग शुभतर शुभ, निखिलागम् युत पूर्ण पुराण।
सूक्ष्मासूक्ष्म सर्व तत्वों का, द्वादशांग में कथन महान्।।
श्रेष्ठ विमल पंतीश्वर ध्याता, स्वात्म ज्ञान वृद्धिकारी।
उपाध्याय निर्द्वन्द सुपाठक, इस जग में मंगलकारी।।4।।

महा मोह आशा के त्यागी, करुणालय अध्यात्म स्वरूप।
पुत्र तनु भव भोग विरत धीमान् निसंग दिगम्बर रूप।।
निज आतम के रसिक श्रेष्ठ जो, ज्ञान ध्यान शुद्धाचारी।
देवेन्द्रों से पूजित मुनिवर, इस जग में मंगलकारी।।5।।

अभय प्रदायक जग जीवों का, दयावान दुःख का हर्ता।
स्वर्ग मोक्ष का साधक अनुपम, मनवांछित सुख का कर्ता।।
सकल विमल सुदिव्य तीर्थ के, अधिपति पावन हितकारी।
जिनवर कथित धर्म है पावन, इस जग में मंगलकारी।।6।।

स्याद्वाद रवि से आलोकित, सुर नर पूजित लोक महान्।
सन्देहादि दोष रहित शुभ, सर्व अर्थ संदेश प्रधान।।
याथातथ्य अजेय सुशासन, आप्त कथित है हितकारी।
कोटि प्रभा भाषित जैनागम, इस जग में मंगलकारी।।7।।

शुद्ध ध्यानमय प्रातिहार्य युत, परमेष्ठी कृत शांतिस्वरूप।
सर्व विकार भाव से वर्जित, सुभग चैतन्य भावमय रूप।।
स्वात्मानंद प्रशांत वदनमय, जिन मुद्रा है अविकारी।
सौम्य सुनिर्मल जिन प्रतिमा है, इस जग में मंगलकारी।।8।।

घंटा तोरण दाम धूप घट, राजत शत् वादित्र महान्।
पूजारंभ महोत्सव मंगल, महाभिषेक स्तोत्र प्रधान।।
महत् पुण्यकारक सत् किरिया, भवि जीवों को हितकारी।
कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्यालय, इस जग में मंगलकारी।।9।।

मंगलदायक श्री जिनवरजी, सिद्ध सूरि आदिक नवदेव।
उत्तम तीर्थ सुतारक भव से, बोधि समाधि दाता एव।।
उज्ज्वलतम् विशुद्ध समतामय, सुचरित्रमय अघहारी।
'विशद' धर्म आतम सुखदायक, इस जग में मंगलकारी।।10।।

●●●

महावीराष्टक स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

ज्ञानादर्श में युगपद दिखते, जीवाजीव द्रव्य सारे।
व्यय, उत्पाद, धौव्य प्रतिभाषित, अंत रहित होते न्यारे।।
जग को मुक्ती पथ प्रकटाते, रवि सम जिन अन्तर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।1।।

नयन कमल झपते नहिं दोनों, क्रोध लालिमा से भी हीन।
जिनकी मुद्रा शांत विमल है, अंतर बाहर भाव विहीन।।
क्रोध भाव से रहित लोक में, प्रगटित हैं अन्तर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।2।।

नमित सुरों के मुकुट मणि की, आभा हुई है कांतिमान।
दोनों चरण कमल की भक्ति, भक्तजनों को नीर समान।।
दुःखहर्ता सुखकर्ता जग में, जन–जन के अंतर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।3।।

हर्षित मन होकर मेंढ़क ने, जिन पूजा के भाव किए।
क्षण में मरकर गुण समूह युत, देवगति अवतार लिए।।
क्या अतिशय नर भक्ति आपकी, करके हो अंतर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।4।।

स्वर्ण समा तन को पाकर भी, तन से आप विहीन रहे।
पुत्र नृपति सिद्धारथ के हैं, फिर भी तन से हीन रहे।।

राग–द्वेष से रहित आप हैं, श्री युत हैं अंतर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।5।।

जिनके वचनों की गंगा शुभ, नाना नय कल्लोल विमल।
महत् ज्ञान जल से जन–जन को, प्रच्छालित कर करे अमल।।
बुधजन हंस सुपरिचित होकर, बन जाते अंतर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।6।।

तीन लोक में कामबली पर, विजय प्राप्त करना मुश्किल।
लघु वय में अनुपम निज बल से, विजय प्राप्त कर हुए विमल।।
सुख शांति शिव पद को पाकर, आप हुए अंतर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।7।।

महामोह के शमन हेतु शुभ, कुशल वैद्य हो आप महान्।
निरापेक्ष बंधु हैं सुखकर, उत्तम गुण रत्नों की खान।।
भव भयशील साधुओं को हैं, शरण भूत अन्तर्यामी।
ऐसे श्री महावीर प्रभु हों, मम् नयनों के पथगामी।।8।।

दोहा

भागचंद भागेन्दु ने, भक्ति भाव के साथ।
महावीर अष्टक लिखा, झुका चरण में माथ।।
पढ़े सुने जो भाव से, श्रेष्ठ गति को पाय।
भाषा पढ़के काव्य की, 'विशद' वीर बन जाय।।

●●●

भक्तामर स्तोत्र

(पद्यानुवाद – आचार्य श्री विशदसागरजी)

दोहा

वृषभनाथ बृषभेष जिन, हो वृष के अवतार।
तारण तरण जहाज तव, करो 'विशद' भवपार।।

(चौपाई)

भक्त अमर नत मुकुट छवि देय, गहन पाप तम को हर लेय।
भव सर पतित को शरण विशाल, 'विशद' नमन जिन पद नत भाल।।1।।

द्वादशांग ज्ञाता सुर देव, जिनवर की करते नित सेव।
शब्द अर्थ पद छन्द बनाय, थुति करता हूँ मैं सिरनाय।।2।।

मंद बुद्धि हूँ अति अज्ञान, करता हूँ प्रभु का गुणगान।
जल में चन्द्र बिम्ब को पाय, बालक मन को ही ललचाय।।3।।

गुणसागर प्रभु गुण की खान, सुर गुरु न कर सके बखान।
क्षुब्ध जंतु युत प्रलय अपार, सागर तैर करे को पार।।4।।

फिर भी 'विशद' भक्ति उर लाय, शक्ति हीन थुति करूँ बनाय।
हिरण शक्ति क्या छोड़ न जाय, मृगपति ढिग निज शिशु न बचाय।।5।।

मैं अल्पज्ञ हास्य को पात्र, भक्ति हेतु है पुलकित गात।
आम्रकली लख ऋतु बसंत, कोयल कुहुके कर पुलकंत।।6।।

पाप कर्म होता निर्मूल, तव थुति जो करता अनुकूल।
सघन तिमिर ज्यों रवि को पाय, क्षण में शीघ्र नष्ट हो जाय।।7।।

थुति करता हूँ मैं मति मंद, मन हरता मन्त्रों का छंद।
कमल पत्र पर जल कण जाय, ज्यों मुक्ता की शोभा पाय।।8।।

तव संस्तुति की कथा विशाल, नाम काटता कर्म कराल।
दिनकर रहें बहुत ही दूर, कमल खिलाता सर में पूर।।9।।

भवि थुतिकर तुम सम हो जाय, या में क्या अचरज कहलाय?
आश्रित करें न आप समान, ऐसे प्रभु का क्या सम्मान ?।।10।।

नयन आपके तन को देख, और नहीं फिर लगते नेक।
क्षीर नीर जो करता पान, क्षार नीर क्यों करे पुमान ?।।11।।

प्रभु तुम शांत मनोहर रूप, परमाणु सम्पूर्ण अनूप।
तुम सा नहीं है जग में कोय, दर्शन की अभिलाषा होय।।12।।

तव अनुपम मुख है भगवान, निरुपम है अति शोभामान।
चन्द्रकांति दिन में छिप जाय, तव मुख शोभा निशदिन पाय।।13।।

'विशद' गुणों के प्रभु भण्डार, तीन लोक को करते पार।
एक नाथ हो आश्रयवान, उन विचरण को रोके आन।।14।।

अचल चलावें प्रलय समीर, मेरु न हिलता हो अतिधीर।
सुर तिय न कर सके विकार, मन प्रभु का स्थिर अविकार।।15।।

जले तेल बाती बिन श्वांस, त्रिभुवन का प्रभु करें प्रकाश।
दीप धूप बिन जलता जाय, तूफां उसको बुझा न पाय।।16।।

ग्रसे राहु न होते अस्त, प्रभु जी रवि से अधिक प्रशस्त।
मेघ ढकें न अती प्रकाश, ज्ञान भानु हो अद्भुत खास।।17।।

उदित नित्य मुख जो तम हार, मेघ राहु से है विनिवार।
सौम्य मुखाम्बुज चन्द्र समान, लोक प्रकाशी कांति महान।।18।।

तमहर तव मुख चन्द्र महान, कहाँ करे निशदिन शशिभान।
खेत में ज्यों पक जाये धान, जलधर वर्षा है निष्काम।।19।।

शोभे ज्ञान तुम्हारे पास, हरि हर में न उसका वास।
कांति महामणि में जो होय, कम्ब में होती क्या वह सोय ?।।20।।

देखे हरि हरादि कई देव, तुम से आज मिले जिनदेव।
श्रद्धा हृदय जगी तव पाय, अन्य देव अब नहीं सुहाय।।21।।

सतनारी सत सुत उपजाय, तुम समान कोई न पाय।
रवि का पूरब में अवतार, तारागण के कई आधार।। 22 ।।

तुमको परम पुरुष मुनि माने, तमहर अमल सूर्यसम जाने।
मृत्युंजय हो प्रभु को पाय, शरण छोड़ जन जगत भ्रमाय।।23।।

भोगाव्यय असंख्य विभु ईश्वर, अचिन्त्य आद्य ब्रह्मा योगीश्वर।
अनेक ज्ञानमय अमल अनंत, कामकेतु इक कहते संत।।24।।

बुध विबुधार्चित बुद्ध महान, शंकर सुखकारी भगवान।
ब्रह्मा शिवपथ दाता नाथ, सर्वश्रेष्ठ पुरुषोत्तम साथ ।।25।।

त्रिभुवन दुखहर तुम्हें प्रणाम, भूतल भूषण तुम्हें प्रणाम।
त्रिभुवन स्वामी तुम्हें प्रणाम, भवसर शोषक तुम्हें प्रणाम।।26।।

शरण में आये सब गुण आन, विस्मय क्या कोई मिला न थान ?
मुख न देखें स्वप्न में दोष, सारे जग में प्रभु निर्दोष।।27।।

तरु अशोक तल में भगवान, उज्ज्वल तन अति शोभामान।
मेघ निकट दिनकर के होय, उस भांति दिखते प्रभु सोय।।28।।

मणिमय सिंहासन पर देव, तव तन शोभे स्वर्णिम एव।
रवि का उदयाचल पर रूप, उदित सूर्य सम दिखे स्वरूप।।29।।

ढुरते चामर शुक्ल विशेष, स्वर्णिम शोभित है तव भेष।
ज्यों मेरु पर बहती धार, स्वर्णमयी पर्वत मनहार।।30।।

तीन छत्र तिय लोक समान, मणिमय शशि सम शोभावान।
सूर्य ताप का करे विनाश, श्री जिन के गुण करे प्रकाश।।31।।

दश दिशि ध्वनि गूँजें गम्भीर, जय घोषक जिनवर की धीर।
तीन लोक में अति सुखदाय, सुयश दुन्दुभि बाजा गाय।।32।।

मंद मरुत गंधोदक सार, सुरगुरु सुमन अनेक प्रकार।
दिव्य वचन श्री मुख से खिरें, पुष्प वृष्टि नभ से ज्यों झरें ।।33।।

त्रिजग कांति फीकी पड़ जाय, भामण्डल की शोभा पाय।
चन्द्र कांति सम शीतल होय, सारे जग का आतप खोय।।34।।

स्वर्ग मोक्ष की राह दिखाय, द्रव्य तत्व गुण को प्रगटाय।
दिव्य ध्वनि है 'विशद' अनूप, ॐकार सब भाषा रूप।।35।।

भवि जीवों का हो उपकार, प्रभु इच्छा बिन करें विहार।
जहँ जहँ प्रभु पग पड़ जायँ, तहँ तहँ पंकज देव रचायँ।।36।।

धर्म कथन में आप समान, अन्य देव न पाते आन।
तारा रवि की द्युति क्या पाय ? वैभव देव न अन्य लहाय।।37।।

गण्डस्थल मद जल से सने, गीत गूँजते अतिशय घने।
मत्त कुपित होकर गज आय, फिर भी भक्त नहीं भय खाय।।38।।

भिदे कुम्भ गज मुक्ता द्वारा, हो भूषित भू भाग ही सारा।
तव भक्तों का केहरि आन, न कर सके जरा भी हान।।39।।

प्रलय पवन अग्नि घन-घोर, उठें तिलंगे चारों ओर।
जग भक्षण हेतु आक्रान्त, नाम रूप जल से हो शांत।।40।।

काला नाग कुपित हो जाय, तो भी निर्भयता को पाय।
हाथ में नाग दमन ज्यों पाय, भक्त आपका बढ़ता जाय।। 41 ।।

हय गय भयकारी रव होय, शक्तीशाली नृप दल सोय।
नाश होय कर प्रभु यशगान, रवि ज्यों करे तिमिर की हान ।।42।।

भाला गज के सिर लग जाय, सिर से रक्त की धार बहाय।
रण में दास विजय तव पाय, दुर्जय शत्रु भी आ जाय।।43।।

क्षुब्ध जलधि बड़वानल होय, मकरादिक भयकारी सोय।
करें आपका जो भी ध्यान, पार करें निर्भय हो थान।।44।।

रोग जलोदर होवे खास, चिन्तित दशा तजी हो आस।
अमृत प्रभु पद रज सिर नाय, मदन रूपता को वह पाय।।45।।

सांकल से हो बद्ध शरीर, खून से लथपत होवे पीर।
नाम मंत्र तव जपते लोग, शीघ्र बंध का होय वियोग।।46।।

गज अहि दव रण बंधन रोग, मृग भय सिंधु का संयोग।
सारे भय भी हों भयभीत, थुति प्रभु की जो करें विनीत।।47।।

विविध पुष्प जिनगुण की माल, प्रभु की संस्तुती रची विशाल।
कंठ में धारण जो कर लेय, मानतुंग सम लक्ष्मी सेय।।48।।

दोहा – मानतुंग की कृति का, भाषा मय अनुवाद।
विशद शांति आनन्द का, भोग करे कर याद।।

•••

सरस्वती स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

कोटी चन्द्र सूर्य से भी अति, उज्ज्वल दिव्य मूर्ति पावन।
धवल चांदनी से अति निर्मल, शुभ्र वस्त्र अति मनभावन।।
समतामय कामार्थ दायिनी, हंसारूढ़ दिव्य आसन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।1।।

नमित सुरासुर के मुकुटों की, मणिमय आभा कांतीमान।
सघन मंजरी से अनुरंजित, पाद पद्म हैं आभावान।।
नील अली सम केश सुसुंदर, प्रमद हस्ति सम गगन गमन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।2।।

मुक्तामणि से निर्मित कुण्डल, हार मुद्रिका अरु केयूर।
निर्मल रत्नावलि सुसज्ञित, मुकुट सुशोभित है भरपूर।।
सर्व अंग भूषण से सज्जित, नर मुनीन्द्र भी करें नमन्।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।3।।

कंकण कनक करधनी सुंदर, कंठ में शोभित कंठाहार।
नूपुर झंकृत होते अनुपम, इत्यादि शोभित उपहार।।
धर्म वारि निध की संतति को, नित प्रति करते हैं वर्धन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।4।।

कदली दल को निंदित करते, मृदुतम जिनके दोनों हाथ।
विकसित कमल समान सुमुख है, कमलासन पर शोभित नाथ।।
सब भाषामय दिव्य देशना, जिन मुख से निःसृत पावन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।5।।

अर्ध चन्द्र सम जटा सुमंडित, कला निधी सुंदर तम रूप।
धारण किए गोद में पुस्तक, जिनका चित् चैतन्य स्वरूप।।
सर्व शास्त्र का करे प्रकाशन, अजपाजाप मय शुभ आसन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।6।।

सागर फेन समान सुसुंदर शंख लिए हैं बर्फ समान।
पूर्ण चन्द्रमा सम शोभित तन, अभ्रहार ज्यों शोभावान।।
दिव्य ललाट सहित चंचल अति, हिरणी शावक समलोचन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।7।।

काम रूपिणी हे ! करणोन्नत, जगत् पूज्य तुम परम पवित्र।
नाग गरुड़ किन्नर के स्वामी, पूजा करते सुर नर नित्य।।
सर्व यक्ष विद्या धरेन्द्र नित 'विशद' करें तुमको वन्दन।
रक्षा करो मात जिनवाणी, प्रतिदिन बारंबार नमन्।।8।।

•••

सरस्वती नाम स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

सरस्वती की कृपा से मानव, करें काव्य की संरचना।
इसीलिए निश्चल भावों से, पूज्य सरस्वती को जपना।।
श्री सर्वज्ञ कथित जिनवाणी, बहु भाषामय जिनका ज्ञान।
हनन करे अज्ञान तिमिर का, विद्या का करती गुणगान।।1।।

दिव्य कमल लोचन से देवी, सरस्वती देखो हमको।
हंसारूढ़ सुपुस्तक वीणा, धारी वंदन है तुमको ।।
प्रथम भारती नाम आपका, द्वितीय सरस्वती है नाम।
तीजा नाम शारदा देवी, हंसगामिनी चौथानाम।।2।।

विदुषां माता नाम पाँचवां, वागीश्वरी है छठवां नाम।
सप्तम नाम कुमारी पावन, ब्रह्मचारिणी अष्टम नाम।।
नौवाँ नाम जगत् माता है, ब्राह्मिणी जिनका दशवां नाम
ग्यारहवां जानो ब्रह्माणी, वरदा है बारहवां नाम।।3।।

वाणी नाम कहा तेरहवां, चौदहवां है भाषा नाम।
श्रुतदेवी है नाम पंचदश, सोलहवां है गौरी नाम।।
प्रात: उठकर श्रुतदेवी के, इन सब नामों को पढ़ते।
कर देती संतुष्ट सुमाता, विद्या में आगे बढ़ते।।4।।

इच्छित वर देने वाली, हे सरस्वती ! है तुम्हें नमन्।
सिद्धि दो हमको हे माता! काम रूपिणी तुम्हे नमन्।।
विद्या का आरंभ करूँ मैं, हे ! ब्रह्माणी तुम्हे नमन्।
'विशद' ज्ञान को देने वाली, श्री जिनवाणी तुम्हें नमन्।।5।।

•••

नवग्रह शांति स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

दोहा– नवग्रह शांति स्तोत्र का, पद्यमयी अनुवाद।
विशद भाव से कर रहे, करें सभी जन याद।।

जगत गुरु को नमस्कार मम्, सद्गुरु भाषित जैनागम्।
ग्रह शांति के हेतु कहूँ मैं, सर्व लोक सुख का साधन।।
नभ में अधर जिनालय में जिन, बिम्बों को शत् बार नमन्।
पुष्प विलेपन नैवेद्य धूप युत, करता हूँ विधि से पूजन।।1।।

सूर्य अरिष्ट ग्रह होय निवारण, पद्म प्रभु के अर्चन से।
चन्द्र भौम ग्रह चन्द्र प्रभु अरु, वासुपूज्य के वन्दन से।।
बुध ग्रह अरिष्ट निवारक वसु जिन, विमलानन्त धर्म जिन देव।
शांति कुन्थु अर नमि सुसन्मति, के चरणों में नमन् सदैव।।2।।

गुरु ग्रह की शांति हेतु हम, वृषभाजित सुपार्श्व जिनराज।
अभिनन्दन शीतल श्रेयांस जिन, सम्भव सुमति पूजते आज।।
शुक्र अरिष्ट निवारक जिनवर, पुष्पदंत के गुण गाते।
शनिग्रह की शांति हेतु प्रभु, मुनिसुव्रत को हम ध्याते।।3।।

राहु ग्रह की शांति हेतु प्रभु, नेमिनाथ गुणगान करें।
केतु ग्रह की शांति हेतु प्रभु, मल्लि पार्श्व का ध्यान करें।।
वर्तमान चौबीसी के यह, तीर्थंकर हैं सुखकारी।
आधि व्याधि ग्रह शांति कारक, सर्व जगत मंगलकारी।।4।।

जन्म लग्न राशि के संग ग्रह, प्राणी को पीड़ित करते।
बुद्धिमान ग्रह नाशक जिनकी, अर्चा कर पीड़ा हरते।।
पंचम युग के श्रुत केवली, अन्तिम भद्र बाहु मुनिराज।
नवग्रह शांति विधि दाता पद, विशद वन्दना करते आज।।5।।

दोहा

प्रात: उठकर भाव से, पाठ करें जो लोग।
पग–पग पर हो कुशलता, मिले शांति का योग।।

चैत्यालयाष्टक

– *आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज*

श्री जिन भवन के दर्शन करके, भव तापों का होता नाश।
धन वैभव का भव्य जीव के, स्वयं आप ही होता वास।।
क्षीर नीर सम धवल सुउज्ज्वल, कोटि–कोटि शोभित होते।
ध्वजा प्रकर शोभित होता है, भव्यों की जड़ता खोते।।1।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, भुवन एक लक्ष्मी को प्राप्त।
धर्म सरोवर वर्धित होता, महत् मुनि से सेवित आप्त।।
विद्याधर अरु अमर बंधुजन, का है मुक्ति रूप अनुराग।
दिव्य पुष्प अञ्जलि समूह से, शोभित है सारा भू–भाग।।2।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, भवनादिक देवों में वास।
जग विख्यात स्वर्ग की गणिका, गीयमान गण का आवास।।
नाना मणी समूह से भासुर, विकसित किरणों का विस्तार।
महत् सुनिर्मल शुभम् सुशोभित, गवाक्ष शोभा का आधार।।3।।

श्री जिन भवनके दर्शन करके, सिद्ध यक्ष सुर अरु गंधर्व।
किन्नर कर में वेणु वीणा, लेकर वाद्य बजाते सर्व।।
नृत्य गान कर करें नमन नित, पूरब पश्चिम चारों ओर।
गगन और पृथ्वी में झूमें, भक्तिमय हो भाव विभोर।।4।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, विलसत और विलोलित माल।
देखके विभ्रम हो जाता है, ललितालक है शुभम् कुलाल।।
मधुर वाद्य लय नृत्य विलासी, लीला चलद वलय अभिराम।
नूपुर से हो रम्यनाद अति, जिन चैत्यालय पूजा धाम।।5।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, उज्ज्वल हेममणीमय भव्य।
हेम रत्नमय कलश सुचामर, दर्पण आदि सुमंगल द्रव्य।।
एक सौ आठ द्रव्य शुभ राजित, मणि मुक्तामय अपरंपार।
इत्यादिक शोभा से मण्डित, चैत्यालय है मंगलकार।।6।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, श्रेष्ठ देव दारू कर्पूर।
चंदन तरु से प्राप्त सुगंधित, धूप मनोहर है भरपूर।
मेघ सुविघटित होता है ज्यों, गगन मध्य में शोभामान।
विमल शाल उत्तुंग सुकेतन, चंचल चलद है आभावान।।7।।

श्रीजिन भवन के दर्शन करके, धवल पत्र शोभित पावन।
छाया में रहते निमग्न तनु, यक्षकुमार सुमन भावन।।
दुग्ध फेन सम श्वेत सुचामर, पंक्तिबद्ध शोभित सुखधाम।
कांति युक्त भामण्डल अनुपम, प्रतिमा शोभित है अभिराम।।8।।

श्री जिन भवन के दर्शन करके, विविध प्रकार पुष्प उपहार।
भूमि पर शोभित होते हैं, अति रमणीय सुरत्न अपार।।
नित्य बसन्त तिलक सम आश्रय, होय प्राप्त शुभ अपरंपार।।
सफल सुमंगल चन्द्र मुनीन्द्रों से, वंदित है बारंबार।।9।।

मणि काञ्चनमय तुंग सुचित्रित, सिंहासन आदी जिनबिम्ब।
अति शोभा से युक्त जिनालय, कीर्तिमान होता प्रतिबिंब।।
'विशद' जिनालय देखा मैंने, आज महामह अपरंपार।
सफल सुमंगल चन्द्र मुनीन्द्रों, से वंदित है बारम्बार।।10।।

●●●

करुणाष्टक

–आचार्य श्री विशदसागरजी

(तर्ज– नित देव मेरी आत्मा...)

त्रिभुवन गुरो ! जिनवर परम्, आनंद कारण आप्त हो।
मुझ दास पर करुणा करो, अतिशीघ्र मुक्ति प्राप्त हो।।
तुम तरण तारण हो प्रभु !, अब शरण अपनी लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।1।।

हे देव अर्हत् ! जगत् की, दुःखमय दशा को जानकर।
हो गया हूँ निर्विक्त मैं इस, जगत् को पहिचानकर।।
हो जन्म न फिर से प्रभु !, अब शरण अपनी लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।2।।

हे देव अर्हत् ! भव भयंकर, कूप में मैं गिर गया।
तुम योग्य हो उससे निकालो, कीजिए मुझ पर दया।।
मैं पुनर्पुन विनती ये करता, शरण अपनी लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।3।।

हे देव ! तुम करुणानिधि हो, जगत् में तुम शरण हो।
मैंने पुकारा आपको तुम, श्रेष्ठ तारण तरण हो।।
इस मोह रिपु ने मद दलित, मेरा किया सुन लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।4।।

हे देव जिन ! पर के सताए, पुरुष पर करुणा करें।
ज्यों गाँवपति उर करुण होकर, और की विपदा हरें।।
त्रैलोक्यपति कर्मों से मेरी, आप रक्षा कीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।5।।

हे देव ! मेरा एक ही, वक्तव्य में यह है कथन।
करके दया अब मैंट दो, इस जगत से जीवन मरण।।
जिससे प्रलापी हो गया मैं, खेद वह हर लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।6।।

हे देव जिन ! मैं जगत् के, संताप से संतप्त हूँ।
चरणों की शीतल छाँव को, पाकर हुआ मैं तृप्त हूँ।।
अमृतमयी करुणा की छाया, में मुझे ले लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।7।।

हे ! पद्मनंदि गुरू से, स्तुत्य जग में इक शरण।
मैं आपके करता हूँ भगवन्, चरण में शत्-शत् नमन्।।
मैं कहूँ क्या ? अति दास को, अपनी शरण ले लीजिए।
करुणानिधि करुणा करो, भव पार हमको कीजिए।।8।।

●●●

ha gw~h AnZo gmW, Z`m hf© boH$a AmVr h¡Ÿ&
EH$ {XZ ì`Vr hmoH$a, Zd-df© boH$a AmVr h¡Ÿ&&
EH$ ~ma AnZm nwéfmW©, OJmH$a XoIo _oao {_ÌŸ&
ha gw~h AnZo gmW, Z`m CËH$f© boH$a AmVr h¡Ÿ&&

अद्याष्टक

– *आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज*

तर्ज – नित देव मेरी आत्मा

हे देव ! दर्शन आपका कर, जन्म मेरा सफल है।
शुभसंपदा अक्षय जो पाई, दर्श का ही सुफल है।।
मम नयन आज सफल हुए हैं, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।1।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, अति गहन अपार है।
वह पार क्षण भर में मिला जो, गहन अति संसार है।।
भव पार होना है सरल अब, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।2।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, नेत्र निर्मल हो गये।
सद्धर्म तीरथ में नहाकर, कर्म सारे खो गये।।
यह आज तन मेरा धुला है, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।3।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, सफल मेरा जन्म है।
वह पार भवसागर का मिला यह, दर्श का ही सुफल है।।
अब सर्व मंगल पा लिए हैं, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।4।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, कर्म की ज्वाला जली।
तब आज यह अतिशय हुआ, वसु कर्म की सेना चली।।
दुर्गती से मुक्ति जो पाई, हृदय मम् भक्ति जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।5।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, विघ्न सारे नश गये।
अब आज सब ग्रह सौम्य होकर, इक जगह में बस गये।।
यह ग्रह एकादश शांत करने, की लगन मन में जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।6।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, घोर दुःखदायक महा।
दुष्कर्म का बंधन बंधा था, आज वह भी न रहा।।
जीवन सुखी हो गया है अरु, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।7।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, आज दुःखदायी सभी।
दुष्कर्म आठों नश गये हैं, दर्श करते ही अभी।।
शुभ सौख्य सागर में मगन हो, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।8।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, तिमिर मिथ्या देह से।
वह नश गया है आज सारा, चेतना के गेह से।।
सद् ज्ञान का आलोक पाया, भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।9।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, पुण्यात्मन् हो गया।
अब आज मेरा आत्मा से, पाप मल सब खो गया।।
मैं हो गया त्रैलोक्य पूज्य, शुभ भक्ति मेरे उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।10।।

हे देव ! दर्शन आपका कर, अद्य अष्टक जो पढ़े।
प्रमुदित हृदय से मोक्ष पथ पर, शीघ्रता से वह बढ़े।।
सब ही प्रयोजन सिद्ध हों यह, 'विशद' भक्ति उर जगी।
पावन परम चरणों में दृष्टि, आपके मेरी लगी।।11।।

●●●

लघु स्वयंभू-स्तोत्र

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

जिसने आत्म ज्ञान के द्वारा, पर का भी उपकार किया।
वित्त कार्य अरु मोक्षमार्ग पर, प्रेरित कर उद्धार कियाङ्क
मोक्षमार्ग को प्रभु ने पाया, मैं भी उसको वरण करूँ।
आदिनाथ के श्री चरणों में 'विशद' भाव से नमन् करूँङ्क1ङ्क

जो सुमेरु पर्वत के ऊपर, ऐरावत पर लाए थे।
देवों ने क्षीरोदधि द्वारा, शुभ अभिषेक कराए थेङ्क
सुखदाता अरु कर्म विजेता, के पद को मैं वरण करूँ।
अजितनाथ के श्रीचरणों में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क2ङ्क

जिनने शुद्ध ध्यान के द्वारा, कर्म घातिया नाश किए।
मोक्ष महापद पाकर के जो, सिद्ध शिला पर वास किएङ्क
श्रीफल अर्पित करके मैं प्रभु, मोक्षमहल को ग्रहण करूँ।
संभव जिन के श्रीचरणों में 'विशद' भाव से नमन् करूँङ्क3ङ्क

जिनकी मां को रात्रि में शुभ, सोलह सपने आए थे।
गज से लेकर के अग्नि तक, महत् चिन्ह दर्शाये थेङ्क
पिता के द्वारा श्रेष्ठ कहे जो, उनको कैसे वरण करूँ।
अभिनंदन जिन के चरणों में, प्रमुदित होकर नमन् करूँङ्क4ङ्क

अनेकांत अरु स्याद्वाद शुभ, महत् धर्म जिसने पाया।
नय प्रमाण सम्यक् वचनों से, जिनमत को भी फैलायाङ्क
कुमत वादियों को जीता है, उस मत को मैं ग्रहण करूँ।
सुमतिनाथ देवाधिदेव को, विशदभाव से नमन् करूँङ्क5ङ्क

जन्म समय सौधर्म इन्द्र ने, धनपति को आदेश दिया।
छह नौ माह पूर्व रत्नों की, वृष्टी का संदेश दियाङ्क
जिस पद को प्रभु ने पाया है, उसका मैं आचरण करूँ।
पद्मप्रभु के श्रीचरणों में, 'विशद' भाव से नमन् करूँङ्क6ङ्क

केवल ज्ञान प्रकट होने पर, जीवों को उपदेश दिया।
चक्रवर्ति धरणेन्द्र सुरों ने, दिव्य ध्वनि को ग्रहण कियाङ्क
दिव्य देशना पाकर मैं भी, समतापूर्वक मरण करूँ।
प्रभु सुपार्श्व के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क7ङ्क

मूर्छा दोष रहित गुण संयुत, प्रातिहार्य वसु पाये हैं।
अतिशय चौंतिस सहित सुधी जिन, केवल ज्ञान जगाए हैंङ्क
दीपक मोह तिमिर के नाशक, मोह का मैं अपहरण करूँ।
चन्द्रप्रभु के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क8ङ्क

पांच महाव्रत समिति गुप्ति का, जिसने शुभ उपदेश किया।
द्वादश तप तपने का पावन, भव्यों को संदेश दियाङ्क
वीतरागता को पाया शुभ, मैं भी उसका वरण करूँ।
पुष्पदंत प्रभु के पद पंकज, विशद भाव से नमन् करूँङ्क9ङ्क

उत्तम क्षमा धर्म से लेकर, ब्रह्मचर्य तक अन्त रहा।
दश प्रकार का धर्म व्रतों की, परम्परा को आप कहाङ्क
केवलज्ञान बुद्धि को पाकर, मैं भी उसको वरण करूँ।
शीतलनाथ प्रभु के पद में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क1ङ्क

द्वादश गण से पृथ्वी तल तक, भव्यों में आनंद भरें।
कोप विनाशक शांत स्वरूपी, द्वादशांग उपदेश करेंङ्क
द्वादशांग श्रुत के स्वामी जिन, उनको उर में वरण करूँ।
श्रेयनाथ के श्रीचरणों में, विशद श्रेय युत नमन् करूँङ्क11ङ्क

रत्नत्रय के महत् हार का, जिसने शुभ निर्माण किया।
मुक्तिवधू ने कण्ठ में जिसको, श्रेष्ठ भाव से धार लियाङ्क
प्रभु ने जिन रत्नों को पाया, मैं भी उनको वरण करूँ।
वासुपूज्य के पूज्य चरण में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क12ङ्क

सम्यक् ज्ञान विवेक युक्त जो, परम स्वरूप के धारक हैं।
ध्यानी व्रती हैं मिथ्याघाती, जन-जन के उपकारक हैंङ्क
मोक्ष सुखों को पाने वाले, मैं भी उसका वरण करूँ।
विमल नाथ के विमल चरण में, विशद भाव से नमन् करूँ ङ्क 13ङ्क

जिसने जीवों के हित हेतु, मोक्षमार्ग को लक्ष्य किया।
अन्तरंग बहिरंग परिग्रह, सभी पूर्णतः त्याग दियाङ्क
राग त्याग बन गये दिगम्बर, मैं भी वह आचरण करूँ।
अनंत नाथ जिनवर के पद में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क 14ङ्क

सप्त तत्त्व अरु नव पदार्थ हैं, काल ना अस्ति काय कहा।
अस्तिकाय हैं पांच द्रव्य छह, अरु अलोक आकाश रहाङ्क
जिसमें इनका कथन किया है, मैं भी उनका मनन करूँ।
धर्मनाथ जिन के चरणों में, विशद धर्मयुत नमन् करूँङ्क 15ङ्क

पंचम चक्रवर्ति पृथ्वी पर, नव निधि रत्नों के स्वामी।
कामदेव द्वादश सोलहवे, जिनवर मुक्ती पथगामीङ्क
विशद गुणों को जिनने पाया, मैं भी उनको ग्रहण करूँ।
शांतिनाथ तीर्थेश चरण में, मन वच तन से नमन् करूँङ्क 16ङ्क

नहीं प्रशंसा में हर्षित हों, निंदा में ना रोष करें।
शीलव्रतों का पालन करते, नहीं कभी विद्वेष करेंङ्क
आतमपद को प्राप्त हुए जो, मैं भी उसका वरण करूँ।
कुन्थुनाथ के विशद चरण में, हर्षभाव से नमन् करूँ ङ्क 17ङ्क

अन्तर्गण की पूर्ति हेतु, समवशरण में आये थे।
नमन् स्तुति रहित केवली, पूर्ण समादर पाए थेङ्क
तीर्थंकर जिन देव परम हैं, मैं उस पद को ग्रहण करूँ।
अरहनाथ के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क 18ङ्क

मन, वच, तन से पूर्व भवों में, पूर्ण विशुद्धि को पाया।
रत्नत्रय व्रत पालन करके, निज आतम को भी ध्यायाङ्क
मोहमल्ल को किया पराजित, मैंभी उसका हनन करूँ।
मल्लिनाथ जिनदेव चरण में, विशद भक्ति युत नमन् करूँङ्क 19ङ्क

लौकांतिक देवों की श्रुति सुन, सिद्ध के पद को नमन् किया।
श्री सिद्धाय नमः कह करके, अपने हाथों लोंच कियाङ्क
प्रभु ने सिद्ध के पद को पाया, मैं भी वह पद वरण करूँ।
मुनिसुव्रत के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँङ्क 2ङ्क

ज्ञानाचार युत तीर्थंकर के, नृप के घर आहार हुए।
रत्न वृष्टि तब की देवों ने, उनके भी उद्धार हुएङ्क
विशद ज्ञान को पाने हेतु, कर्मों से संग्राम करूँ।
नमीनाथ जिनके चरणों में, स्तुति सहित प्रणाम करूँङ्क 21ङ्क

जीवों पर करुणा धारण कर, जग से नाता तोड़ चले।
पुनरागमन मेटने हेतु, राजीमती को छोड़ चलेङ्क
मोक्ष में स्थित हुए प्रभु जी, जाकर मैं विश्राम करूँ
भक्तिभाव से नेमिनाथ जिन, पद में विशद प्रणाम करूँङ्क 22ङ्क

ध्यान अवस्था में बैठे थे, कमठ ने तब उपसर्ग किया।
फण फैलाया पद्मावती ने, अरु धरणेन्द्र ने दूर कियाङ्क
ध्यान के द्वारा विशद ज्ञान हो, मैं भी उसका मनन करूँ।
महतभाव से पार्श्वनाथ के, श्री चरणों में नमन् करूँङ्क 23ङ्क

पाप के कारण भवसागर में, डूब रहे थे जो प्राणी।
देख उन्हें निश्चय करके तब, सुना गये अमृत वाणीङ्क
धर्मपोत से उन्हें बचाया, धर्म को ध्याऊँ चारों याम।
तीर्थंकर श्रीवर्धमान को, विशदभाव से करूँ प्रणामङ्क 24ङ्क

रचा भव्य स्त्री पुरुषों को, विमल गुणानुवाद महान् ।
अर्हत् की वाणी में भाषित, दश प्रकार का धर्म प्रधान।।
मन वच तन की शुद्धि पूर्वक, पुष्प समर्पित करते हैं।
एक लक्ष्मी को पाकर शुभ, स्वर्ग मोक्ष पद वरते हैं।।25।।

●●●

एकीभाव स्तोत्र

एकमेक होकर नितान्त जो, मानो स्वयं हुआ अनिवार्य।
ऐसा कर्म–प्रबन्ध भवों तक, दुख देने का करता कार्य।।
उससे पिण्ड छुड़ा सकती जब, हे जिन–सूर्य आपकी भक्ति।
तो फिर कौन अन्य भवतापी, जिन पर वह अजमावे शक्ति।।1।।

''पाप–पुंज रूपी अँधियारे, के विनाश के हेतु मशाल।
आप कहे जाते हैं जिनवर'', तत्त्वज्ञों द्वारा चिरकाल।।
मेरे मन–मन्दिर में जब तक, है ज्योतिर्मय तेरा वास।
तब तक कैसे पाप–तिमिर को, उसमें मिल सकता अवकाश।।2।।

टप–टप गिरे हर्ष के आँसू, उनसे अपना मुख धोया।
दृढ़ मन होकर गद्‌गद् स्वर से, मन्त्र कीर्तन संजोया।।
काया की बाँबी में बसते, थे नाना रोगों के नाग।
वे अपनी चिर जगह छोड़कर, गये शीघ्र अब बाहर भाग।।3।।

भव्यों के सौभाग्य उदय से, आप स्वर्ग से करें प्रयाण।
उसके पहिले यहाँ सुरों ने, स्वर्णिम किया गर्भ–कल्याण।।
मेरे मनहर मन–मन्दिर में, ध्यान–द्वार से यदि आवें।
तो क्या अचरज देव ! कोढ़ि की, कञ्चन काया कर जावें।।4।।

लोकहितैषी एकमात्र हैं, बन्धु आप ही निष्कारण।
सर्व विषयगत शक्ति आपमें, ही है जिनवर ! निरावरण।।
आओ पधारो ! बिछी हुई है, भक्ति खचित यह मनकी सेज।
पर कैसे तब धीर धरेंगे, जब निकलेंगी आहें तेज।।5।।

भवारण्य में बहुत समय तक, रहा स्वयं को भटकाता।
जैसे तैसे मिल पाई तव, सुधा–बावड़ी नय–गाथा।।
वह इतनी शीतल है जितना, बर्फ चन्द्र या चन्दन अब।
डुबकी उसमें लगा चुका हूँ, नहीं तापका बन्धन अब।।6।।

कदम–कदम पर बिछते जाते, कमल पांवडे देव पुनीत।
सुरभित स्वर्णिम हो जाते जब, श्रीविहार से लोकपुनीत।।
तब मेरा मन छू ले यदि, सर्वाङ्ग रूप से तुमको देव !
अहा ! कौन सा कल्याणक फिर, प्राप्त नहीं होगा स्वयमेव।।7।।

देखा जाता है कि तुम्हें जो, भक्त निहारा करते हैं।
कर्मभूमि से निकल काम को, भू पर मारा करते हैं।।
भक्तिरूप अँजुलि में भरकर, तव वचनामृत जो पीते।
भूलुंठित कर क्रूर–रोग को, निष्कंटक सुख से जीते।।8।।

पत्थर का खम्भा कोई तो ? मानस्थम्भपाषाण हृदय।
मूर्तिमान हैं रत्न यही बस, वैसे ढेरों रत्नत्रय।।
ज्यों ही सम्यक् दृष्टि पड़ी उस पर, त्यों ही अभिमान गला।
निकट भव्यता की ऐसी, पावे तो कोई शक्ति भला?।।9।।

तेरी मूरत कायागिरि को, छूकर बहती हुई पवन।
धूल उड़ाती रोगों की जन, मानस में कर संचारण।।
फिर जिस हृदय–कमल के तुम हो, ध्यानामंत्रित अभ्यागत।
उसको किस लौकिक भलाई की, प्राप्त नहीं प्रभुवर ! ताकत।।10।।

तुम्हीं जानते जैसे जो जो, जनम जनम के कष्ट सहे।
उनके संस्मरण भी मुझको, मानो भाले चुभा रहे।।
सर्वेश्वर करुणाकर ! हो प्रभु, अत: भक्तिवश तव शरणम्।
मुझे सभी कुछ प्रामाणिक है, जैसा जो कुछ करणीयम्।।11।।

णमोकार के मूलमन्त्र को, कुत्सित कुत्ता मरणासन्न।
जीवन्धर द्वारा पाते ही, हुआ देव जब सुख-सम्पन्न।।
तो मणिमालाओं द्वारा पद, नमस्कार मन्त्रों का जाप्य।
करने वाले पुरुषों को सच, इन्द्रों का भी वैभव प्राप्य।।12।।

मोहरूप-मुद्रा के कारण, मुक्तिद्वार के बन्द कपाट।
कैसे खुल सकते मुमुक्षु के, द्वारा कुञ्जीहित विराट।।
सम्यग्दर्शन भक्ति-रूपिणी, कुञ्जी सुखदा पास न हो।
ज्ञान भले ही विमल रहो, आचरण भले ही शुद्ध रहो।।13।।

ढका हुआ चहुँ ओर पाप के, घोर अंधेरे में शिव-पन्थ।
दु:खरूपी गहरे गड्ढों से, ऊबड़-खाबड़ है अत्यन्त।।
आगे आगे तत्त्व-दर्शिका, दीपक-मणि यदि जिनवाणी।
होती नहीं मार्ग पर कैसे, चल सकते सुख से प्राणी।।14।।

कर्मभूमि के तहखानों में, गड़ा-पड़ा अक्षुण्ण खजाना।
हर्षित आत्मज्योतिनिधि-दृष्टा, वाममार्गियों अनजाना।।
भक्त भेदिया करें हस्तगत, निश्चय ही उसको तत्काल।
खोदें कर्मभूमि की पर्तें, कठिन हाथ ले विनय-कुदाल।।15।।

अनेकान्तरूपी हिमगिरि से, देव ! भक्ति-गंगा निकली।
चूम-चूम श्रीचरण-कमल को, शिवसागर में पुन: मिली।।
मेरे मन का मैल धुल गया, उसमें अवगाहन करके।
क्या संदेह ? रहा आऊँगा, निर्मल मन-पावन करके।।16।।

''शाश्वत सुखपदप्रकटरूपप्रभु''! ऐसा करते ध्यान ध्यान।
निर्विकल्प मति छा जाती है, ''मैं भी हूँ सोऽहम् भगवान''।।
झूठ बात-''भगवान कहाँ हूँ?'' किन्तु चैन इससे मिलती।
तेरी अनुकम्पा से छद-मस्थों, की भी वांछा फलती।।17।।

जिनवाणी रूपी समुद्र कर, रह व्याप्त भू-मण्डल को।
सप्तभङ्ग की तरल तरंगे, हटा रहीं मिथ्या-मल को।।
मन-सुमेरु रूपी मथनी से, किया गया सागर-मन्थन।
तृप्त करेगा विज्ञजनों को, देवोपम अमृत-सेवन।।18।।

जो स्वभावत: ही कुरूप है, उसे चाहिए गहने वस्त्र।
जिसे शत्रु से खटका रहता, वही ग्रहण करता है अस्त्र।।
तुम सर्वाङ्ग रूप से सुन्दर, तथा अजात-शत्रु जिनदेव।
अस्त्र-शस्त्र या वस्त्राभूषण, सज्जा व्यर्थ तुम्हें स्वयमेव।।19।।

''इन्द्र आपकी सेवा करता, भली-भाँति'' क्या हुई बड़ाई?
किन्तु इन्द्र ने ऐसा करके, निजी प्रशंसा अभव बढ़ाई?
भव-सागर से पार करैया, तुम शिव-रमणी के भगवान !
इसी प्रशंसा से हो सकता, लोकेश्वर का गौरव-गान।।20।।

जड़ शब्दों की प्रवृति और है, निज स्वरूप चिन्मय कुछ और।
ऐसे पहुँच सकेंगे तुम तक, वाक्य हमारे हैं सिरमौर।।
भले न पहुँचे भक्ति-सुधा में, पगे हुए भीने उद्गार।
भव्यों को तो बन जावेंगे, कल्पवृक्ष वाँछित दातार।।21।।

नहीं किसी पर अनुकम्पा है, नहीं किसी पर किञ्चितरोष।
चित्त आपका सचमुच सबसे, उदासीन एवं निर्दोष।।
तो भी बैर भुलाने वाला, विश्वबन्धु-मय अनुशासन।
नहीं किसी के पास मिलेगा, आप सरीखा हे ! भगवन्।।22।।

गाय गया अप्सराओं द्वारा, नाथ ! आपका गौरव-गान।
सकल विषय गत मूर्तिमान है, देव आपका केवल-ज्ञान।।
उस मुमुक्षु को शिव-मग टेढ़ा-मेढ़ा नहीं लगा करता।
मूढ़ न होता तात्त्विक चर्चा, में रखता जो तत्परता।।23।।

अतुल चतुष्टय रूप आपका, समा गया जिसके मन में।
सादर समयसारता पूर्वक, जो तल्लीन कीर्तन में।।
पुण्यवान वह गायन से ही, तय करता श्रेयस मंजिल।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष फिर, जाते उसको पाँचों मिल।।24।।

अहो भक्त इन्द्रों से पूजित, चरण आपके अपरम्पार।
सूक्ष्मज्ञानदर्शी मुनि यति भी, जिनगुण गायन में लाचार।।
मन्दबुद्धि हम कहाँ विचारे, फिर भी एक बहाना यह।
कल्पवृक्ष है, आत्म सुखद है, तब प्रशस्ति है गाना यह।।25।।

●●●

विषापहार स्तोत्र

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

आत्मरूप में संस्थित हैं अरु, त्रिभुवन के हैं पथगामी।
वेत्ता हैं सब व्यापारों के, अपरिग्रही हैं जिन स्वामी।।
दीर्घायु से सहित आप हैं, वृद्ध अवस्था से भी हीन।
श्रेष्ठ पुराण नरोत्तम जग में, जो विनाश से पूर्ण विहीन।।1।।

युग का भार विचिन्तित जिसने, अन्य अकेले ही धारा।
एवं जिनका गुण कीर्तन भी, सम्भव न मुनियों द्वारा।।
अभिनंदन के योग्य मेरे वह, श्री वृषभ दु:ख के हर्त्ता।
रवि अभाव में हे प्रभुवर ! क्या, दीप प्रवेश कहाँ करता।।2।।

तव संस्तुति करने का भी, जब त्याग चुका मद है सुरपति।
पर में तव गुण गाने का भी, करे न उद्यम हे जिनपति !।।
वातायन सम सीमित होकर, अल्प ज्ञान से मैं इस क्षण।
करता हूँ उनसे विस्तृत अति, व्यापक अर्थ का मैं निरुपण।।3।।

आप सभी के ज्ञाता दृष्टा, किन्तु सबसे आदर्शित।
वेत्ता भी हो आप सभी के, विदित नहीं हो स्पर्शित।।
कितने हैं ? कैसे हैं ? प्रभुजी बता नहीं पाते ज्ञानी।
प्रभु तव संस्तुति से प्रगटित हो, मेरी शक्ति अन्जानी।।4।।

जो शिशुओं सम व्याकुल जग में, अपने दोषों के कारण।
उन दोषों का पूर्ण रूप से, किया आपने है वारण।।

मूढ़ बुद्धि हित और अहित का, कर न पाते हैं निर्णय।
बाल वैद्य बनकर निश्चिय से, करते भव रोगों का क्षय।।5।।

कुछ भी हरण नहीं करता है, न ही कुछ देता दिनकर।
आज और कल की आशाएँ, सब जीवों को दिखलाकर।।
हो असमर्थ दिवस खो देता, प्रतिदिन ही जगती को छल।
शीघ्र आप तन जन को बन्धु, दे देता मन वांछित फल।।6।।

जो अनुकूल आपके चलते, वह प्राणी सुख से रहते।
रहते जो प्रतिकूल आपके, जग के अगणित दु:ख सहते।।
आप सदा दोनों के आगे, दर्पण सम रहते भगवान।
अपनी आभा में निमग्न हो, होते नहीं कभी भी क्लान।।7।।

सागर का गहरापन भाई, सागर तक मर्यादित है।
अरु सुमेरु की ऊँचाई भी, मात्र उसी तक सीमित है।।
वसुधा और गगन की सीमा, तीन लोक में रही महान्।
तव गुण से कण-कण पूरित है, तीन लोक में हे भगवान।।8।।

है सिद्धांत आपका प्रभुवर, अनवस्थित है और यथार्थ।
पुनरागमन व्यवस्था का न, घोषित किया आपने अर्थ।।
इह लौकिक सुख त्याग सौख्य शुभ, पर लौकिक के अभिलाषी।
शरणागत को मिले आपके, रहे और विरोधाभाषी।।9।।

हुआ वस्तुत: आपके द्वारा, मर्यादित शुभ कार्य अशेष।
हुआ मनोज कलंकित शम्भू, कैसे माने गये विशेष।।

लक्ष्मी से प्रेरित होकर के, विष्णु भी सोये स्वमेय।
जागृत थे अविराम आप क्यों, ग्राह्य हुए फिर कैसे एव।।10।।

ब्रह्मादि या अन्य देव कोइ, सारे जग के सविकारी।
उनके दोष कथन से गरिमा, रह पाती न अविकारी।।
जिस कारण सागर की महिमा, हो स्वभावत: हे जिनवर !
सिद्ध नहीं हो पाए कभी भी, सरवर को छोटा कहकर।।11।।

कर्म पिण्ड को भव-भव में यह, जीव साथ ले जाता है।
वही कर्म का पिण्ड जीव को, हर गति साथ घुमाता है।।
हे जिनेन्द्र ! नौका नाविक सम, भव जल में यह दिखलाया।
सत्य नियम नेतृत्व परस्पर, कहकर जग को बतलाया।।12।।

जैसे तेल प्राप्त करने को, शिशु पेला करते रज कण।
विमुख आपके शासन से त्यों, देव अनेकों है नर गण।।
सुख की इच्छा से दु:ख पाते, गुण की इच्छा करके दोष।
धर्म हेतु पापों का संचय, करके भरते उनका कोष।।13।।

मणी मंत्र औषधी रसायन, खोज रहें हैं विषहारी।
भोले प्राणी भटक रहे हैं, खोज रहे विस्मयकारी।।
मणी मंत्र औषधि आप कुछ, नहीं ध्यान में भी लाते।
क्योंकि आपके ही यह सारे, पर्यय नाम कहे जाते।।14।।

स्वयं आप अपने मन में हे, देव ! नहीं कुछ भी करते।
प्राणी भाव सहित इस जग के, मोद सहित उर में धरते।।

मानो सर्व जगत् को उनने, किया हाथ में भी संचित।
है आश्चर्य ! आप चेतन से, रहित लोक में हो जीवित।।15।।

त्रैकालिक तत्वों के ज्ञाता, अरु त्रिलोक के हो स्वामी।
उनकी निश्चितता से संख्या, बन जाती प्रभु अनुगामी।।
नहीं ज्ञान के शासन में पर, यह संख्या समुचित मानी ।
होती कोई और यदि वह, जान रहे केवलज्ञानी।।16।।

शिवपुर के स्वामी की सेना, सर्व जगत् में मनहारी।
हे आगम ! के धारी अनुपम, नहीं आपकी उपकारी।।
जैनागम के दिनकर को शुभ, क्षत्र लगाने वाली है।
आत्मिक सुख देने वाली जो, जग में विशद निराली है।।17।।

कहाँ आप निर्मोही जिनवर, कहाँ सुखद उपदेश महान्।
इच्छा के विपरीत निरूपण, कहाँ आपका हो भगवान।।
कहाँ लोक प्रियता होती है, कहाँ लोक रंजकता एव।
यों विरोध है सब प्रकार से, होय नहीं सद्रूप सदैव।।18।।

दानी निष्किन्चन से जो फल, पल में ही मिल जाता है।
धनशाली लोभी जन से वह, नहीं प्राप्त हो पाता है।।
अद्रि शिखर से जल विहीन ज्यों, अगणित सरिताएँ बहती।
पर हे नाथ ! सभी सरिताएँ, सागर से दूर सदा रहती।।19।।

तीनों लोकों की सेवा के, अर्थ नियम के जो कारण।
अधिक विनय से सुरपति द्वारा, दण्ड किया था जो धारण।।

प्रातिहार्य उसको यों होते, नहीं आपको संभव नाथ।
कर्म योग से वही आपके, पद में झुका रहे हैं माथ।।20।।

निर्धन जन लक्ष्मी शाली को, सदा देखते हैं सादर।
शिवा आपके निर्धन को वह, धनी नहीं देते आदर।।
तिमिरावस्थित प्राणी को ही, ज्यों प्रकाश दिखलाता है।
त्यों प्रकाश स्थित प्राणी को, नहीं देखने पाता है।।21।।

ज्यों प्रत्यक्ष वृद्धि उच्छवासों, का दृग ज्योति के भाजन।
निजस्वरूप के अनुभव की जो, शक्ति न रखते हैं भविजन।।
सकल विश्व के ज्ञायक वह सब, ज्ञानमयी गुण के सागर।
लोकाध्यक्ष आपको कैसे, समझ पाएँगे हे जिनवर !।।22।।

नाभिराय नन्दन हे जिनवर !, पिता भरत के आप महान्।
नाथ ! आपकी वंशावलि कह, अपमानित करते इन्सान।।
स्वर्ण प्राप्त करके हाथों में, पत्थर जन्म समझते हैं।
फिर अवश्य ही जग के, प्राणी पत्थर कहकर तजते हैं।।23।।

तीन लोक में मोह सुभट ने, जय का पटह बजाया है।
हुए तिरस्कृत उससे सब पर, लाभ मोह ने पाया है।
उसको भी तो आपके सम्मुख, पड़ा पराजित होना देव।
सत्य सबल का रिपु रहा जो, नाश हुआ वह पूर्ण सदैव।।24।।

जो भी देखा नाथ आपने, मोक्षमार्ग पर रहा गमन।
औरों ने जो भी देखा वह, चतुर्गति का रहा भ्रमण।।
सर्व चराचर मैंने देखा, ऐसा कभी नहीं कहकर।
स्वयं भुजाएँ अपने मद से, देखी नहीं कभी जिनवर।।25।।

राहु सूर्य का ग्राहक है तो, जल पावक का संहारक।
जो कल्पान्त काल का भीषण, मारुत सागर का नाशक।।
विरह भाव इस जग के भोगों, का क्षयकारी रहा विशेष।
सिवा आपके सबका अरि संग, होता है संयोग जिनेश।।26।।

बिना आपको जाने जिनवर ! विजयी फल पाता जैसा।
देव समझ करके औरों को, कभी न फल पावे वैसा।।
निर्मल मणि को काँच समझकर, धारण जो करता सज्जन।
मणि को मणी समझने वाला, होता नहीं कभी निर्धन।।27।।

ज्यों व्यवहार कुशल पटु वक्ता, चतु:कषायों से दहते।
रागी द्वेषी मोही जन को, देव निरन्तर जो कहते।।
बुझे हुए दीपक को प्राणी, जैसे कहते दीप बड़ा।
कहते हैं कल्याण हुआ जब, फूट जाय यदि कोई घड़ा।।28।।

हैं एकार्थ आपके वर्णित, कई अर्थों के प्रतिपादक।
त्रिभुवन हितकारी वचनों के, कौन लोक में है धारक।।
निर्दोषत्व न तत्क्षण अपना, प्रभुवर अनुभव को पाता।
सच है ज्वर से विरहित योगी, स्वर सुगम्य कहा जाता।।29।।

इच्छा नहीं आपकी कुछ भी, खिरते वचन स्वयं पावन।
किसी काल में वैसा होता, नियम नहीं न अपनापन।।
उगता नहीं सोच ज्यों शशि यह, करूँ सिन्धु को मैं पूरित।
पर स्वभावत: प्रतिदिन रजनी, दूर करे होकर समुदित।।30।।

गुण गण हैं हे नाथ ! आपके, अनुपम अगणित अरु गम्भीर।
और अपरिमित श्रेष्ठ समुज्ज्वल, विविध भांति उत्कृष्ट सुधीर।।

यों तो अन्त दिखाता उनका, नहीं स्तवन में जिनवर।
और अन्य गुण क्या हो सकते, हे जिनेन्द्र ! इनसे बढ़कर।।31।।

केवल संस्तुति करने से ही, मन वाच्छित न होवे सिद्ध।
सद्भक्ति और नमस्कृति से, संस्मृति से होय प्रसिद्ध।।
प्रतिपल नत होकर ध्याता जो, भजे आपको भी अत एव।
परम साध्य फल पा लेता है, कारण किसी विधि से एव।।32।।

प्रभु अतएव त्रिलोक स्वरूपी, इस नगरी के अधिकारी।
शाश्वत हैं अति श्रेष्ठ प्रभामय, प्रभु निस्सीम शक्ति धारी।।
पुण्य पाप से विरहित हैं जो, पुण्य हेतु जग में वन्दित।
स्वयं अखण्ड प्रभु को करता, मैं प्रणाम हो आनन्दित।।33।।

जो स्पर्श हीन अति नीरस, गंध रूप से पूर्ण विहीन।
और शब्द से रहित जिनोत्तम, तद्विषयक हैं ज्ञान प्रवीण।।
प्रभु सर्वज्ञ स्वयं होकर भी, अन्य जनों से जो वंदित।
ध्याते हम अस्मार्य जिनेश्वर, विशद भाव से हो प्रमुदित।।34।।

जो गम्भीर सिन्धु से बढ़कर, मन द्वारा भी अनुलंधित।
निष्किन्चन होने पर भी जो, धनवानों द्वारा याचित।।
जो हैं सबके पार स्वरूपी, पर जिनका न पाए पार।
शरण प्राप्त हो जाए उनकी, जगत्पति जो अपरम्पार।।35।।

त्रिभुवन के दीक्षा गुरुवर हे ! नमन् आपको शत्-शत् बार।
वर्धमान होकर भी उन्नत, स्वयं आप हो अपरम्पार।।
मेरु गिरि के पूर्व में टीला, शिला राशि फिर पर्वत राज।
क्रमश: कुल गिरि हुआ न फिर भी, था स्वभाव से उन्नत ताज।।36।।

जो स्वमेव प्रकाशित जिसको, दिन अरु रात का भेद नहीं।
न बाधकता अरु बाधत्व का, न ही होता नियम कहीं।।
यों जिनके न कभी भी लाघव, और न गौरव है अणुभर।
अविनाशी उन एक रूप जिन, को प्रणाम मेरा सादर।।37।।

हे प्रभुवर ! यों संस्तुति करके, मैं भी दीन भाव के साथ।
नहीं माँगता हूँ वर कोई, क्योंकि आप उपेक्षक नाथ ।।
वृक्षाश्रित को स्वयं आप ही, मिल जाती छाया शीतल।
भीख माँगने से छाया की, मिलता है क्या कोई फल।।38।।

यदि आग्रह कुछ देने का है, या देने की अभिलाषा।
हो जाऊँ भक्ति में तत्पर, यही मात्र मेरी आशा।।
है विश्वास आप अब वैसी, कृपा करोगे हे जिनवर !।
निज शिष्यों पर करुणाकर क्या ?, होते नहीं श्री गुरुवर।।39।।

जिस किस भाँति से सम्पादित, देव वंद्य हे जिननायक !
मन वाच्छित फल देने वाली, भक्ति कर्मों की क्षायक।।
संस्तुति विषयक भक्ति आपकी, देती है शुभ फल निश्चय।
विशद ओज विद्यादायक है, कीर्ति विभा जय ही अक्षय।।40।।

न्याय और व्याकरण के ज्ञाता, कविगण एवं संत सहाय।
वादिराज की तुलना में वह, सभी पूर्णतः हैं निरुपाय।।
पाकर शुभ आशीष गुरु का, किया पद्यमय यह अनुवाद।
'विशद' ज्ञान के सुधा कलश से, पाने को अनुपम आस्वाद।।41।।

इति विषापहारस्तोत्र समाप्त

कल्याण मन्दिर स्तोत्र भाषा

– कुमुदजी

श्रेय सिन्धु–कल्याण कर, कृत निज–पर–कल्याण।
पार्श्व पंच कल्याण मय, करहु विश्व – कल्याण।।

अनुपम करुणा की सुमूर्ति शुभ, शिव–मंदिर अघनाशक मूल।
भयाकुलित व्याकुल मानव के, अभयप्रदाता अति–अनुकूल।।
बिन कारन भवि जीवन तारन, भव–समुद्र में यान–समान।
ऐसे पाद–पद्म प्रभु पारस, के अर्चूं मैं नित अम्लान।।1।।

जिसकी अनुपम गुण–गरिमा का, अम्बु राशि सा है विस्तार।
यश–सौरभ सु–ज्ञान आदि का, सुरुगुरु भी नहिं पाता पार।।
हठी कमठ–शठ के मद–मर्दन, को जो धूमकेतु–सा सूर।
अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी तीर्थपति की भरपूर।।2।।

अगम–अथाह–सुखद–शुभ–सुंदर, सत्स्वरूप तेरा अखिलेश।
क्यों करि कह सकता है मुझसा, मन्दबुद्धि–मूरख करुणेश।।
सूर्योदय होने पर जिसको, दिखता निज का गात नहीं।
दिवाकीर्ति क्या कथन करेगा, मार्तण्ड का नाथ कहीं।।3।।

यद्यपि अनुभव करता है नर, मोहनीय विधि के क्षय से।
तो भी गिन न सकैसु गुण तव, मोहेतर कर्मोदय से।।
प्रलयकाल में जब जलनिधि का, बह जाता है सब पानी।
रत्न–राशि दिखने पर भी क्या, गिन सकता कोई ज्ञानी?।।4।।

तुम अति सुंदर शुद्ध अपरिमित, गुणरत्नों की खानि स्वरूप।
वचननि करि कहने को उमगा, अल्पबुद्धि मैं तेरा रूप।।

यथा मन्दमति लघु शिशु अपने, दोऊ कर को कहै पसार।
जल-निधि को देखहु रे मानव ! है इसका इतना आकार।।5।।

हे प्रभु ! तेरे अनुपम सद्‌गुण, मुनिजन कहने में असमर्थ।
मुझसा मूरख औ अबोध क्या, कहने को हो सके समर्थ।।
पुनरपि भक्ति-भाव से प्रेरित, प्रभु-स्तुतिको बिना विचार।
करता हूँ, पंछी ज्यों बोलत, निश्चित बोली के अनुसार।।6।।

है अचिन्त्य महिमा स्तुति की, वह तो रहे आपकी दूर।
जबकि बचाता भव-दु:खों से, मात्र आपका 'नाम' जरूर।।
ग्रीष्म कुरित के तीव्र-ताप से, पीड़ित-पंथी हुये अधीर।
पद्म-सरोवर दूर रहे पर, तोषित करता सरस-समीर।।7।।

मन-मंदिर में वास करहिं जब, अश्वसेन वामा-नन्दन।
ढीले पड़ जाते कर्मों के, क्षण भर में दृढ़तर बंधन।।
चंदन के विटपों पर लिपटे, हों काले विकराल भुजंग।
वन-मयूर के आते ही ज्यों, होते उनके शिथलित-अंग।।8।।

बहु विपदाएँ प्रबल वेग से, करें सामना यदि भरपूर।
प्रभु-दर्शन से निमिषमात्र में, हो जाती वे चकनाचूर।।
जैसे गो-पालक दिखते ही, पशु-कुल को तज देते चोर।
भयाकुलित हो करके भागें, सहसा समझ हुआ अब भोर।।9।।

भक्त आपके भव-पयोधि से, तिर जाते तुमको उरधार।
फिर कैसे कहलाते जिनवर, तुम भक्तों की दृढ़ पतवार?।।
वह ऐसे, जैसे तिरती है, चर्म-मसक जलके ऊपर।
भीतर उसमें भरी वायु का, ही केवल यह विभो असर।।10।।

जिसने हरिहरादि देवों का, खोया यश-गौरव-सम्मान।
उस मन्मथ का हे प्रभु ! तुमने, क्षण में मेट दिया अभिमान।।
सच है, जिस जल से पलभर में, दावानल हो जाता शान्त।
क्या न जला देता उस जल को, बडवानल होकर अशान्त।।11।।

छोटी सी मन की कुटिया में, हे प्रभु ! तेरा ज्ञान अपार।
धार उसे-कैसे जा सकते भविजन भव-सागर के पार।।
पर लघुता से वे तिर जाते, दीर्घ-भार से डूबत नाहिं।
प्रभुकी महिमा ही अचिन्त्य है, जिसे न कवि कह सकैं बनाहिं-।।12।।

क्रोध-शत्रु को पूर्व शमनकर, शान्त बनायो मन-आगार।
कर्म-चोर जीते फिर किसविध, हे प्रभु ! अचरज अपरम्पार।।
लेकिन मानव अपनी आँखों, देखहु यह पटतर संसार।
क्या न जला देता वन-उपवन, हिम सा शीतलविकट तुषार।।13।।

शुद्धस्वरूप अमल अविनाशी, परमातमसम ध्यावहिंतोय।
निज-मन-कमल-कोष मधिढूँढ़हिं, सदा साधुतजि मिथ्यामोह।।
अतिपवित्रनिर्मल-सुकांतियुत, कमलकर्णिका बिननहिंऔर।
निपजत कमल बीज उसमें ही, सबजगजानहिं और न ठौर।।14।।

जिस कुधातु से सोना बनता, तीव्र अग्नि का पाकर ताव।
शुद्ध स्वर्ण हो जाता जैसे, छोड़ उपलतापूर्ण विभाव।।
वैसे ही प्रभु के सु-ध्यान से, वह परिणति आ जाती है।
जिसके द्वारा देह-त्याग, परमात्मदशा पा जाती है।।15।।

जिस तनसे भवि चिंतन करते, उस तनको करते क्यों नष्ट।
अथवा ऐसा ही स्वरूप है, है दृष्टान्त एक उत्कृष्ट।।
जैसे बीचवान बन सज्जन, बिना किये ही कुछ आग्रह।
झगड़े की जड़ प्रथम हटाकर, शांत किया करते विग्रह।।16।।

हे जिनेन्द्र तुममें अभेद रख, योगीजन निज को ध्याते।
तव-प्रभाव से तज विभाव वे, तेरे ही सम हो जाते।।
केवल जल को दृढ़श्रद्धा से, मानत है जो सुधा-समान।
क्या न हटाता विष-विकार वह, निश्चय से करने पर पान।।17।।

हे मिथ्यातम अज्ञान रहित, सुज्ञानमूर्ति ! हे परम यती।
हरिहरादि ही मान अर्चना, करते तेरी मन्दमती।।
है यह निश्चय प्यारे मित्रों, जिनके होत पीलिया रोग।
श्वेत शंखको विविध-वर्ण, विपरीत रूप देखें वे लोग।।18।।

धर्म-देशना के सुकाल में, जो समीपता पा जाता।
मानव की क्या बात कहूँ, तरु तक अशोक है हो जाता।।
जीववृन्द नहिं केवल जाग्रत, रवि के प्रकटित ही होते।
तरु तक सजग होत अति हर्षित, निद्रा तज आलस खोते।।19।।

है विचित्रता सुर बरसाते, सभी ओर से सघन सुमन।
नीचे डंठल ऊपर पंखुरी, क्यों होते हैं हे ! भगवन्।।
है निश्चित सुजनों सुमनों के, नीचे को होते बंधन।
तेरी समीपता की महिमा है, हे ! वामादेवी-नंदन।।20।।

अति गम्भीर हृदय-सागर से, उपजत प्रभु के दिव्य वचन।
अमृततुल्य मानकर मानव, करते उनका अभिनन्दन।।
पी-पीकर जग-जीव वस्तुतः, पा लेते आनन्द अपार।
अजर-अमर हो फिर वे जगकी, हर लेते पीड़ा का भार।।21।।

ढुरते चारु चँवर अमरों से, नीचे से ऊपर जाते।
भव्य जनों को विविधरूप से, विनय सफल वे दर्शाते।।
शुद्धभाव से नत-शिर हो जो, तव पदाब्ज में झुक जाते।
परमशुद्ध हो ऊर्ध्वगती को, निश्चय करि भविजन पाते।।22।।

उज्ज्वल हेम सुरत्न पीठ पर, श्याम सुनत शोभित अनुरूप।
अतिगम्भीर सुनिःसृत वाणी, बतलाती है सत्य स्वरूप।।
ज्यों सुमेरु पर ऊँचे स्वर से, गरज गरज घन बरसैं घोर।
उसे देखने सुनने को जन, उत्सुक होते जैसे मोर।।23।।

तुम तन-भा-मण्डलसे होते, सुरतरु के पल्लव छविछीन।
प्रभुप्रभाव को प्रकट दिखाते, हो जड़रूप चेतनाहीन।।
जब जिनवर की समीपतातैं, सुरतरु हो जाता गतराग।
तब न मनुज क्यों होवेगा जप, वीतराग खो करके राग।।24।।

नभ-मण्डल में गूँज गूँजकर, सुर दुन्दुभिकर रही निनाद।
रे रे प्राणी आतमहित नित, भजले प्रभुको तज परमाद।।
मुक्तिधाम पहुँचाने में जो, सार्थवाह बन तेरा साथ।
देंगे त्रिभुवनपति परमेश्वर, विघ्न-विनाशक पारसनाथ।।25।।

अखिल-विश्व में हे प्रभु ! तुमने, फैलाया है विमल-प्रकाश।
अतः छोड़कर स्वाधिकार को, ज्योतिर्गण आया तव पास।।
मणि-मुक्ताओं की झालर युत, आतपत्र का मिष लेकर।
त्रिविध-रूपधर प्रभुको सेवें, निशिपति तारान्वित होकर।।26।।

हेम-रजत-मानक से निर्मित, कोट तीन अति शोभित से।
तीन लोक एकत्रित होके, किये प्रभु को वेष्टित से।।
अथवा कान्ति-प्रताप-सुयश के, संचित हुए सुकृत के ढेर।
मानों चारों दिशि से आके, लिया इन्होंने प्रभु को घेर।।27।।

झुके हुये इन्द्रों के मुकुटों, को तज कर सुमनों के हार।
रह जाते जिन चरणों में ही, मानो समझ श्रेष्ठ आधार।।

प्रभु का छोड़ समागम सुन्दर, सु-मनस कहीं न जाते हैं।
तब प्रभाव से वे त्रिभुवनपति, भव-समुद्र तिर जाते हैं।।28।।

भव-सागर से तुम परान्मुख, भक्तों को तारो कैसे?।
यदि तारो तो कर्म-पाक के, रस से शून्य अहो कैसे?।।
अधोमुखी परिपक्व कलश ज्यों, स्वयं पीठ पर रख करके।
ले जाता है पार सिन्धु के, तिरकर और तिरा करके।।29।।

जगनायक-जगपालक होकर, तुम कहलाते दुर्गत क्यों?।
यद्यपि अक्षरमय स्वभाव है, तो फिर अलिखित अक्षर क्यों?।।
ज्ञान झलकता सदा आप में, फिर क्यों कहलाते अनजान?।
स्व-पर प्रकाशक अज्ञजनों को, हे प्रभु ! तुम ही सूर्य-समान।।30।।

पूरव बैर विचार क्रोध करि, कमठ धूलि बहु बरसाई।
कर न सका प्रभु तव तन मैला, हुआ मलिन खुद दुखदाई।।
कर करिके उपसर्ग घनेरे, थककर फिर वह हार गया।
कर्मबन्ध कर दुष्ट प्रपंची, मुँह की खाकर भाग गया।।31।।

उमड़ घुमड़ कर गर्जत बहुविध, तड़कत बिजली भयकारी।
बरसा अति घनघोर दैत्य ने, प्रभु के सिर पर कर डारी।।
प्रभु का कछु न बिगाड़ सकी वह, मूसल सी मोटी धारा।
स्वयं कमठ ने हठधर्मी वश, निग्रह अपना कर डारा।।32।।

कालरूप विकराल वृक्ष विच, मृत-मुंडन की धरि माला।
अधिक भयावह जिनके मुख से, निकल रही अग्नि ज्वाला।।
अगणित प्रेत पिशाच असुर ने, तुम पर स्वामिन भेज दिये।
भव-भव के दुःख हेतु क्रूर ने, कर्म अनेकों बांध लिये।।33।।

पुलकित वदन-सु-मन हर्षित हो, जो जन तम माया जंजाल।
त्रिभुवनपतिके चरण-कमल की, सेवा करते तीनों काल।।
तुम प्रसादतैं भविजन सारे, लग जाते भव-सागर-पार।
मानव जीवन सफल बनाते, धन्य धन्य उनका अवतार।।34।।

इस असीम भव-सागर में नित, भ्रमत अकथ जो दुःख पायो।
तोऊ सु-यश तुम्हारो साँचो, नहिं कानों तक सुन पायो।।
प्रभु का नाम-मन्त्र यदि सुनता, चित्त लगा करके भरपूर।
तो यह विपदारूपी नागिन, पास न आती रहती दूर।।35।।

पूरव भव में तव चरनन की, मनवांछित फल की दातार।
कभी न की सेवा भावों से, मुझको हुआ आज निरधार।।
अतः रंक जन मेरा करते, हास्यसहित अपमान अपार।
सेवक अपना मुझे बनालो, अब तो हे ! प्रभु जगदाधार।।36।।

दृढ़निश्चय करि मोहतिमिर से, मूँदे मूँदे थे लोचन।
देख सका ना उनसे तुमको, एकबार हे दुखमोचन।।
दर्शन कर लेता गर पहिले, तो जिसकी गति प्रबल अरोक।
मर्मच्छेदी महा अनर्थक, पाता कभी न दुःख के थोक।।37।।

देखा भी है, पूजा भी है, नाम आपका श्रवण किया।
भक्तिभाव अरु श्रद्धापूर्वक, किन्तु न तेरा ध्यान किया।।
इसीलिये तो दुःखों का मैं, गेह बनता हूँ निश्चित ही।
फले न किरिया बिना भावके, लोकोत्तर सुप्रचलित ही।।38।।

दीन-दुःखी जीवों के रक्षक, हे ! करुणासागर प्रभुवर।
शरणागत के हे ! प्रतिपालक, हे ! पुण्योत्पादक जिनवर।।

हे जिनेश ! मैं भक्तिभाव वश, शिर धरता तुमरे पग पर।
दु:खमूल निर्मूल करो प्रभु, करुणा करके अब मुझ पर।।39।।

हे शरणागत के प्रतिपालक, अशरण जनको एक शरण।
कर्म-विजेता त्रिभुवननेता, चारु चन्द्रसम विमल चरण।।
तव पद-पङ्कज पा करके ऐ, प्रतिभाशाली बड़भागी।
कर न सका यदि ध्यान आपका, हूँ अवश्य तब हतभागी।।40।।

अखिल वस्तु के जान लिये हैं, सर्वोत्तम जिसने सब सार।
हे जगतारक ! हे जगनायक ! दुखियों के हे करुणागार।।
वन्दनीय हे दया-सरोवर, दीन-दुखी की हरना त्रास।
महा-भयङ्कर भव-सागर से, रक्षा कर अब दो सुखवास।।41।।

एकमात्र है शरण आपकी, ऐसा मैं हूँ दीन-दयाल !
पाऊँ फल यदि किञ्चित करके, चरणों की सेवा चिर-काल।।
तो हे तारन-तरन नाथ हे, अशरण-शरण मोक्षगामी।
बनें रहें इस- परभव में, बस मेरे आप सदा स्वामी।।42।।

हे जिनेन्द्र ! जो एकनिष्ठ तब, निरखत इकटक कमल-वंदन।
भक्तिसहित सेवा से पुलकित, रोमाञ्चित है जिनका तन।।
अथवा रोमावलि के ही जो, पहिने हैं कमनीय वसन।
यों विधि-पूर्वक स्वामिन् तेरा, करते हैं जो अभिनन्दन।।43।।

जन दृगरूपी 'कुमुद' वर्ग के, विकसावन हारे राकेश।
भोग-भोग स्वर्गों के वैभव, अष्टकर्म-मल कर नि:शेष।।
स्वल्पकाल में मुक्तिधाम की, पाते हैं वे दशा-विशेष।
जहाँ सौख्य-साम्राज्य अमर है, आकुलता का नहीं प्रवेश।।44।।

।। इति भाषाकल्याण मन्दिर स्तोत्र समाप्त ।।

अकलंक स्तोत्र

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

जिसने अंगुली सहित हथेली, में रेखाएँ तीन समान।
तीन लोक आलोक काल तिय, आलोकित प्रत्यक्ष प्रमाणङ्क
राग द्वेष भय रोग जरामय, लोभादि पद से हैं हीन।
महादेव वह मेरे द्वारा, वन्दित सन्ध्याओं में तीनङ्क 1ङ्क

काम बाण की ज्वालाओं से, तीन लोक को जला दिया।
पागल सम श्मशान घाट में, जिसने खुलकर नृत्य कियाङ्क
तृषा क्रोध भय दु:ख मोह के, क्षायक जग के क्षेमंकर।
कार्तिकेय के पिता नहीं वह, सर्वज्ञ रहे मेरे शंकरङ्क 2ङ्क

दैत्यराज का सीना जिसने, नाखूनों से ध्वस्त किया।
अर्जुन का सारथी बन रण में, कौरव को विध्वस्त कियाङ्क
नहीं विष्णु वह महाविष्णु मम्, अव्याबाध है जिसका ज्ञान।
विश्व व्याप्त कर वृद्धि करता, मुझे इष्ट वह है भगवानङ्क 3ङ्क

जिसके चित्त में उर्वसि ने भी मन, काम वासना उपजाई।
दण्ड कमण्डल पात्र आदि अरु, अकृत्य कृत्यता प्रगटाईङ्क
वह ब्रह्मा कैसे मेरा हो, मम् ब्रह्मा कृतकृत्य रहा।
क्षुधा तृषा श्रम राग रोग बिन, मम् ब्रह्मा तो नित्य कहाङ्क 4ङ्क

मगरमच्छ के माँस को खाता, कहता जीव है सून वदन।
कर्म करे फल न पावे वह, क्षणिक ज्ञान का करे कथनङ्क
सर्व द्रव्य को जान न पावे, फिर कैसे कहलाए बुद्ध।
तीन लोक को युग पद जाने, वह मेरा है ज्ञानी बुद्धङ्क 5ङ्क

महादेव यदि ईश विगतभय, छिन्न लिंग क्यों ले त्रिशूल।
स्वामी को शिक्षा साधु को, सुत पत्नी क्या है अनुकूलङ्क
यदि अजन्मा सकल ज्ञानवित्, आर्दासुत क्यों कहा अनात्म।
सत् संक्षेप कथन से पशु वह, ज्ञानी कौन कहे परमात्मङ्क 6ङ्क

चर्म अक्षमाला युत ब्रह्मा, चित्त देवियों में विभ्रान्त।
महादेव खटिया पर सोते, पार्वती के मोह में क्लान्तङ्क
ग्वाल सुता का सेवन करते, विष्णु चक्ररत्न धारी।
इनमें राग के नाशक निर्भय, अर्हत् आप्त ज्ञानधारीङ्क 7ङ्क

सहस भुजाओं को फैलाकर, शिव करते चउदिश में नृत्य।
विष्णु शेष नाग शैया पर, सोते सुमुख खोलकर कृत्यङ्क
ब्रह्मा तिलोत्तमा के मुख दर्शन, हेतु सुमुख बनाए चार।
विद्वत मोक्ष मार्ग ये कहते, वह आश्चर्य भरा संसारङ्क 8ङ्क

विश्व जानने योग्य जानते, रागादि भवदधि के पार।
पूर्वोपर के रोध हीन, निरुपम निर्दोष वचन संसारङ्क
साधु बन्ध रागादि नाशक, सर्वगुणों के स्वामी नाथ।
नाम कोई ब्रह्मा विष्णु शिव, बुद्ध वीर के चरणों माथङ्क 9ङ्क

जटा मुकुट माया कपाल अरु, मूर्धावली न है खटवांग।
धनुष सर्प न शूल उग्रमुख, काम कामिनी न मालांगङ्क
नृत्य गीत अरु बैल नहीं है, सूक्ष्म निरन्जन शिव आकार।
हम सबकी सब जगह जिनेश्वर, रक्षा करो करो भवपारङ्क 1ङ्क

जग को ब्रह्मा व्याप्त भू वाला, हरि शिव मुद्रा से भी व्याप्त।
चन्द्र सूर्य किरणों से सुरपति, वज्रांकित हे वादी! न आप्तङ्क

गणपति बौद्ध यक्ष अरु अग्नि, शेषनाग से देखो न व्याप्त।
वीतराग इस जग को वादी, देखो पूर्ण दिगम्बर आप्तङ्क 11ङ्क

मौजी दण्ड कमण्डल आदि, ब्रह्मा बौद्ध का रक्तांबर।
गदा शंख चक्रादि विष्णु का, चिन्ह नहीं कहते जिनवरङ्क
जटा कपाल मुकुट खटवांगा, स्त्री रूद्र का चिन्ह नहीं।
हे वादी! देखो इस जग में, जिन मुद्रा तो नग्न रहीङ्क 12ङ्क

द्वेष भाव कुछ भी न मन में, मात्र करुण बुद्धि से युक्त।
मोक्ष मार्ग से भ्रष्ट हुए जो, आत्म शून्यता से संयुक्तङ्क
सभा लगी हिमशीतल नृप की, मानी हो करने को वाद।
मूढ़ बौद्ध भक्तों को जीता, घट को फोड़ा मार के लातङ्क 13ङ्क

हाथों में खट्वांग हृदय पर, रचित मुण्डमाला न होय।
तन पर भस्म शूल गिरि दुहिता, नहिं कपाल हाथों में कोयङ्क
चन्द्रावली शीष नहि कंठे, सर्प नहीं देवों का देव।
दोष मुक्त ईश्वर को बन्दूँ, जो त्रिलोक पति रहे सदैवङ्क 14ङ्क

सम्यक् श्रुत सागर की लहरों, से आकुल भगवति भगवान।
तारा का मस्तक विस्तृत कर, जिसने सहज जगाया ज्ञानङ्क
कलयुग में सत् पथ दिखलाए, जीते मिथ्यात्वादि कलंक।
रत्नत्रय के धारी ज्ञानी, वाद योग्य हैं क्या अकलंकङ्क 15ङ्क

भगवती मान तारा ने निज को, अकलंक प्रभु से वाद किया।
छह महिने में तर्क युक्ति से, प्रभु ने उसको मात दियाङ्क
आश्चर्य चकित हुए निश्चय से, यतः ततः मन भञ्जन सहते।
ऐसा मान रहे हैं हम यह, अज्ञानी मिथ्यात्वी रहतेङ्क 16ङ्क

●●●

गणधर वलय स्तोत्र

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

कर्म घातिया अरि को जीता, जो हैं सर्व गुणों में ज्येष्ठ।
देश सर्व परमावधि धारक, कोष्ठ बीज बुद्धि अति श्रेष्ठ।।
पादानुसारिणी बुद्धि आदि, धारक गणधर देव महान।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।1।।

संभिन्न श्रोतृत्व धारी जिन हे !, प्रत्येक बुद्ध अरु बोधित बुद्ध।
मोक्षमार्ग रूपी सु धर्ममय, आप स्वयं में स्वयं प्रबुद्ध।।
सच्चे मुनियों के स्वामी हैं, ऐसे गणधर देव महान्।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।2।।

द्वय प्रकार मनपर्यय ज्ञानी, ऋजु विपुलमति पाया ज्ञान।
दश पूरब धारी मुनिवर हैं, चौदह पूर्व धारी गुणवान।।
अष्टांग महानिमित्त के ज्ञाता, शास्त्र कुशल गणधर भगवान।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।3।।

महा प्रभाव विक्रिया ऋद्धि, धारी विद्या धारक नाथ।
चारण ऋद्धि प्राप्त किए हैं प्रज्ञावान आप हैं साथ।।
नित्य गगन में गमन करें जो, ऐसे गणधर देव महान्।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।4।।

आशी विष दृष्टी विष ऋद्धी, के धारक मुनिराज प्रधान,
अति उग्र तप दीप्त तपोतप, तप्त ऋद्धी धारक गुणवान।
महा घोर तप ऋद्धि धारक, ऐसे गणधर देव महान।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।5।।

देवों द्वारा वंदनीय हैं लोक पूज्य सदगुण धारी,
जगत् पूज्य ज्ञानी जीवों के, सद्गुण धारक ब्रह्मचारी।
घोर पराक्रम धारण करते, ऐसे गणधर देव महान,
उनके गुण की प्राप्ति हेतु चरणों करते 'विशद' प्रणाम।।6।।

आमर्द्धि अरु खेलार्द्धि युत, प्रजल्ल तथा विड ऋद्धीवान्।
पीड़ा आदि हरने वाले, सर्व ऋद्धि हैं जिन्हें प्रधान।।
मन बल वचन काय ऋद्धि युत, ऐसे गणधर देव महान।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।7।।

सत्क्षीर स्रावी धृतस्रावी युत, मधुर स्रावी ऋद्धिधारी।
अमृत स्रावी अक्षीण महानस, वर्धमान ऋद्धिधारी।।
तीन लोक में पूज्य मुनीश्वर, ऐसे गणधर देव महान।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।8।।

सिद्धालय में आप विराजित, महत् श्री जिनवर अतिवीर।
वर्धमान ऋद्धि विशिष्ट युत, बुद्धि ऋद्धिधारी गुण धीर।।
मुक्ती वर ऋषि मुनी इन्द्र अरु, श्री गणनायक देव महान्।
उनके गुण की प्राप्ति हेतु, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।9।।

नर सुर विद्याधर से पूजित, श्रेष्ठ बुद्धि भूषित गुणखान।
विविध गुणों के सागर हैं जो, गज मन्मथ को सिंह समान।।
भव सागर को पोत रूप हैं, मुनि समूह के इन्द्र महान।।
सिद्धि दो हमको हे भगवन !, करते चरणों 'विशद' प्रणाम।।10।।

गणधर वलय को शुद्ध मन से, नित्य पढ़ता भाव से।
पाप का वह नाश करता, पुण्य पावे चाव से।।
भूत विष आदि कुव्याधि, के उपद्रव नाश हों।
शुभ अशुभ सब स्वप्न दिखते, अंतिम समाधिवास हो।।11।।

•••

आध्यात्म शयन गीतिका

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

शुद्ध बुद्ध हो नित्य निरंजन, विशद ज्ञान के धारी हो।
इस जग की माया से निर्वृत्त, पूर्ण रूप अविकारी हो।।
इस शरीर से भिन्न अन्य तुम, सब चेष्टाओं को छोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।1।।

तुम हो ज्ञाता दृष्टा निर्मल, हो परमात्म स्वरूप अखण्ड।
सद्‌गुण के आलय जित् इन्द्रिय, तेजस्वी हो अमल प्रचण्ड।।
मानादिक मुद्रा को तजकर, राग-द्वेष को भी छोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।2।।

तुम हो शांत संयमित आतम, अविनाशी हो सिद्ध स्वरूप।
सब प्रकार के मल से निर्वृत, निष्कलंक हो ज्योती रूप।।
इस संसार की माया तजकर, छल छद्‌म को भी छोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।3।।

मुक्त चिदात्मक हो तुम चेतन, एक चिरन्तन है स्वरूप।
हो चिद्रूपभाव मय बन्धु, 'विशद' अतीन्द्रिय तेरा रूप।।
मोह छोड़कर के इस तन से, परिजन से नाता तोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।4।।

कर्म रूप तुम नहीं हो चेतन, तुम हो पूर्णरूप निष्काम।
रत्नत्रय युत वेत्ता हो तुम, परम पवित्र हो आतम राम।।

चेतन से नाता तुम जोड़ो, काम भाव को तुम छोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।5।।

तुम प्रमाद से मुक्त सुनिर्मल, आतम ब्रह्म बिहारी देव।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुखमय तुम, ऽनन्त चतुष्टय धारी एव।।
अपने चिद् आतम की रक्षा, में अपने मन को मोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।6।।

तुम कैवल्य भाव मय बन्धु, योग मुक्त तेरा स्वरूप।
सर्व तत्त्व वेत्ता हो चेतन, रोग मुक्त शुभ आतम रूप।।
चित् स्वरूप से निज को जोड़ो, शेष भाव सब तुम छोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।7।।

ज्ञान भाव आदी के कर्ता, तुम हो काम वासना मुक्त।
हो सर्वज्ञ सर्वदर्शी तुम, हो चैतन्य रूप संयुक्त।।
निज अभीष्ट परमातम से अब, 'विशद' आप नाता जोड़ो।
मात शांतला के वचनों से, बेटा ! तुम नाता जोड़ो।।8।।

●●●

{JaVo-{JaVo hr, ~mbH$ MbZm grI nmVm h¡Ÿ&
Y¥V {_bZo na hr XrnH$, ObZm grI nmVm h¡Ÿ&&
{Og BÝgmZ Ho$ AÝXa, ào_ hmoVm h¡ àmUr _mÌ goŸ&
dh BÝgmZ hr BÝgmZ go, {_bZm grI nmVo h¢Ÿ&&

गोमटेश स्तुति

– आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

चन्द्र समान सुमुख अति सुंदर, लोचन नील कमल दल रूप।
चंपक पुष्प पराजित होता, देख नाशिका का स्वरूप।।
कामदेव पद से शोभित हैं, बाहुबली है जिनका नाम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।1।।

जिनके स्वच्छ सुनिर्मल जल सम, शोभित सुन्दर उभय कपोल।
कर्ण कंध पर्यंत झूलते, बालों की संरचना गोल।।
गज सुण्डासम उभय भुजाएँ, गगन रूप शोभित अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।2।।

दिव्य शंख की शोभा को भी, जीत रहा है सुंदर कंठ।
विशद हिमालय की भांति है, वक्षस्थल जिनका उत्कंठ।।
अचल सुसुंदर कटि प्रदेश है, सुदृढ़ प्रेक्षणीय अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।3।।

विंध्यगिरि के अग्र भाग पर, शुभम् कांति से दमक रहे।
सब चैत्यों के शिखामणि हो, पूर्ण चाँद सम चमक रहे।।
तीन लोकवर्ती जीवों को, सुख देते अनुपम अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।4।।

लिपटी महत् लताएँ जिनके, महत् देह पर चारों ओर।
कल्पवृक्ष सम भवि जीवों को, कर देते हैं भाव विभोर।।

देवेन्द्रों के द्वारा अर्चित, चरण कमल जिनके अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।5।।

पूर्ण दिगंबर निर्भय साधक, जो हैं निज आतम के भक्त।
मन विशुद्ध जिनका वस्त्रों में, होता नहीं, कभी आसक्त।।
सर्पादि की फुंकारों से, कंपित न होते अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।6।।

स्वच्छ दृष्टि शुभ बुद्धि वाले, दोष मूल है मोह विहीन।
नाश किया उस महाबली को, सुख की आशा से भी हीन।।
किया पराजित भ्रात भरत को, शल्य रहित शोभित अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।7।।

सर्व परिग्रह रहित आप हैं, धन अरु धाम के त्यागी देव।
मद अरु मोह जीतने वाले, क्षायिक समदृष्टि हैं एव।।
एक वर्ष पर्यंत अखंडित, 'विशद' किया अनशन अभिराम।
विश्व वंद्य श्री गोमटेश पद, मेरा बारंबार प्रणाम।।8।।

●●●

ObZo dmbm Xrn hr, àH$me Xo nmVm h¡Ÿ&
{IbZo dmbm \y$b hr, gwdmg Xo nmVm h¡Ÿ&&
Xw{Z`m‚ _| ahVo h¡, `y± Vmo AZoH$m| {_ÌŸ&
AnZo go {_bZo dmbm hr, {dídmg Xo nmVm h¡Ÿ&&

वीतराग स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

शुद्ध बुद्ध शिव विश्वनाथ पर, कर्ता कर्म न बंधुदेव।
अंग संग न स्वेच्छा कायं, नमो निःसंग चिदानंद एव।।1।।

बंध मोक्ष रागादि दोष न, योग भोग व्याधि न शोक।
क्रोध मान माया न लोभं, नमो निःसंग चिदानंद एव।।2।।

हस्त पाद न घ्राणं जिह्वा, भृत्य मर्त्य स्वामी न देव।
चक्षु कर्ण न वक्त्रं निद्रा, नमो निःसंग चिदानंद एव।।3।।

क्षुद्र भीत न कार्श्यं तन्द्रा, जन्म मृत्यु न चिंता मोह।
स्वेद खेद न मुद्रा वर्णं, नमो निःसंग चिदानंद एव।।4।।

विश्वनाथ त्रिदण्ड त्रिखण्डे, पुण्य पाप चाक्षादि न गात्र।
कर्मजाल विध्वस्त हृषीकेश, नमो निःसंग चिदानंद एव।।5।।

बाल वृद्ध न तुच्छ मूढ़ न, स्वेद भेद न मूर्ति स्नेह।
कृष्ण शुक्ल न मोहं तंद्रा, नमो निःसंग चिदानंद एव।।6।।

अद्य मध्य न अंतं मन्या, द्रव्य क्षेत्र न कालो भाव।
दीन हीन गुरु शिष्य 'विशद' न, नमो निःसंग चिदानंद एव।।7।।

ज्ञान रूप ये तत्व स्ववेदी, अन्य भिन्न परामर्थ न एक।
पूर्ण शून्य न चैत्य स्वरूपी, नमो निःसंग चिदानंद एव।।8।।

गुण निधि गुणकर आत्मराम हे !, अद्भुत चेतन रत्नाकर।
भूत, भविष्यत्, वर्तमान सब, सुख दुःख ज्ञाता करुणाकर।।
तीन लोक के अधीपति को, योगी–जन मन से ध्याते।
हरीवंश के श्रीमान् का, वंदन कर उर हर्षाते।।

परमानंद स्तोत्र

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

परमानंद सहित जिनवर जी, सर्व विकारों से वर्जित।
रोगमुक्त आतम निश्चय से, कर्म नहीं करती अर्जितङ्क
निज शरीर में रहे विराजित, परमातम के ध्यान विहीन।
देख नहीं पाते नर जग के, हृदय कमल पर हैं आसीनङ्क 1ङ्क

ज्ञानामृत से भरा समुद्र ज्यों, सुख अनंत से है परिपूर्ण।
बल अनंत युत परमातम का, अवलोकन करना तुम पूर्णङ्क 2ङ्क

निर्विकार अरु निराबाध है, सर्व संग से हैं वर्जित।
परमानंद विशिष्ट शुद्ध शुभ, चैतन्य सुलक्षण है अर्जितङ्क 3ङ्क

उत्तम आत्म चिंता है मध्यम, पर कल्याण की चिंता है।
अधम काम की चिंता भाई, अधमाधम पर चिंता हैङ्क 4ङ्क

निर्विकल्पता को पाकर के, करते ज्ञान सुधारस पान।
कर विवेक अंजली सुनिर्मित, पीते हैं साधू गुणवानङ्क 5ङ्क

परमानंद विशिष्ट आत्मा, को जाने जो ज्ञानी जीव।
निज आतम सेवी वह पंडित, कारण परमानंद सजीवङ्क 6ङ्क

कमल पत्र पर भिन्न सु जल कण, रहता है उससे संयुक्त।
निर्मल आतम तन में रहकर, रहता उससे पूर्ण वियुक्तङ्क 7ङ्क

निश्चय नय से चिद् आतम है, द्रव्य कर्म से पूर्ण विमुक्त।
क्षमा आदि भावों से वर्जित, नो कर्मों से है निर्मुक्तङ्क 8ङ्क

जन्म से अंधा पुरुष सूर्य को, जैसे देख नहीं पावे।
तन में चेतन परमानंदी, ध्यान हीन न लख पावेङ्क 9ङ्क

ध्यान से मन स्थिर हो जाता, परमानंद में होय विलीन।
उसी ध्यान से शुद्ध चिदातम्, के दर्शन में होय प्रवीणङ्कोङ्क

ध्यानशील जो मुनि श्रेष्ठ हैं, वह दुख से हो जाते मुक्त।
परमानंद प्राप्त कर क्षण में, मोक्ष प्राप्त होते निर्मुक्तङ्क 11ङ्क

हीन सर्व संकल्प विकल्पों, से होते हैं निज में लीन।
निज परमात्म स्वरूपी नायक, मुनि स्वभाव में हो लवलीनङ्क 12ङ्क
चिदानंद मय शुद्ध निरामय, है अनंत सुख से सम्पन्न।
निराकार होता निश्चय से, सर्व संग आतम से भिन्नङ्क 13ङ्क
लोक प्रमाण आतम निश्चय से, संशय इसमें नहीं रहा।
तनू मात्र व्यवहार से जानो, परमेश्वर ने यही कहाङ्क 14ङ्क
जिस क्षण में योगी यह जाने, उस क्षण विभ्रम होय विनाश।
स्थिर होकर स्वस्थ चित्त से, निर्विकल्प हो निज में वासङ्क 15ङ्क
परम ब्रह्म कहलाए वह ही, जिन पुंगव भी वही रहा।
वह ही परम तत्व है भाई, परम गुरु भी वही कहाङ्क 16ङ्क
वही परम ज्योति कहलाएँ, परम सुतप भी वही रहा।
वह ही परम ध्यान है भाई, परमातम भी वही कहाङ्क 17ङ्क
वही सर्व कल्याण कहाए, सुख भाजन भी वही रहा।
वही शुद्ध चिद्रूप है भाई, परम सुशिव भी वही कहाङ्क 18ङ्क
वही परम आनंद कहाए, सुख दायक भी वही रहा।
वह ही परम ज्ञान है भाई, गुण सागर भी वही कहाङ्क 19ङ्क
परमाह्लाद संपन्न देह में, राग द्वेष से हैं वर्जित।
जाने जो अरहंत देव को, पण्डित वही ज्ञान अर्जितङ्क 2ङ्क
निराकार शुभ शुद्ध स्वरूपी, सिद्ध अष्ट गुण से परिपूर्ण।
निर्विकार अति नित्य निरंजन, निज स्वरूप चिंतन में पूर्णङ्क 21ङ्क
निज आतम को सिद्ध स्वरूपी, जाने पण्डित वही कहा।
परम ज्योति चैतन्य प्रकाशी, सहजानंदी जीव रहाङ्क 22ङ्क
पत्थर में ज्यों स्वर्ण छुपा है, दुग्ध मध्य में घृत जानो
तिल में जैसे तेल छुपा है, देह मध्य त्यों शिव मानोङ्क 23ङ्क
काष्ठ में अग्नि शक्ति रूप से, विद्यमान ही नित्य रहे।
त्यों ही आतम तन में मानो, पण्डित ज्ञानी वही कहेङ्क 24ङ्क

सोलह कारण भावना

रचियता : आचार्य विशदसागर

दोहा – सोलह कारण भावना, विशद भाव से भाय।
तीर्थंकर पदवी लहे, मोक्ष महाफल पाय।।

दर्शन विशुद्धि भावना

मोह तिमिर से आच्छादित है, तीन लोक सारा।
काल अनादि से भटके हैं, मिथ्या भ्रम द्वारा।।
कभी नरक नर सुर गति पायी, पशु गति में भटके।
राग द्वेष मद मोह प्राप्त कर, विषयों में अटके।।
सप्त तत्व छह द्रव्य गुणों में, श्रद्धा उर धरना।
मिथ्या भाव छोड़कर सम्यक्, रुचि प्राप्त करना।।
शंकादि दोषों को तजकर, भेद ज्ञान पाना।
दरश विशुद्धि गुणीजनों ने, या को ही माना।।1।।

विनय सम्पन्न भावना

अहंकार दुर्गति का कारण, सद्गति का नाशी।
निज के गुण को हरने वाला, दुर्गुण की राशि।।
मद की दम को दमन करें जो, बनकर श्रद्धानी।
नम्र भाव धारण करते हैं, जग में सद्ज्ञानी।।
उच्च गोत्र का कारण बन्धु, मृदुल भाव गाया।
पुण्य पुरुष होता है जिसने, विनय भाव पाया।।
'विशद' विनय सम्पन्न भावना, भाव सहित गाये।
तीर्थंकर सा पद पाकर के, सिद्ध शिला जाये।।2।।

अनातिचार भावना

नर भव पाया रत्न अमौलिक, विषयों में खोता।
भोगों में अनुराग लगा जो, अतिचार होता।।
अतिचार से रहित व्रतों, को पाले जो कोई।
प्रकट होय आतम निधि उसकी, सदियों से खोई।।
कृत कारित अरु अनुमोदन से, मन–वच–तन द्वारा।
नव कोटी से शील व्रतों का, पालन हो प्यारा।।
सोलहकारण शुभम् भावना, भाव सहित भावे।
अनतिचार व्रत शील से अपना, जीवन महकावे।।3।।

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावना

ज्ञानावरणी कर्म ने भाई, जग में भरमाया।
सम्यक् ज्ञान हृदय में मेरे, जाग नहीं पाया।।
सम्यक् श्रद्धा के द्वारा अब, सम्यक् ज्ञान जगाना।
ज्ञाता बनकर ज्ञान के द्वारा, चित् में चित्त लगाना।।
अजर अमर पद पाने हेतु, ज्ञान सुधामृत पाना।
ॐकार मय जिनवाणी के, शुभ छन्दों को गाना।।
ज्ञान योग होता अभीक्ष्ण, यह शुद्ध भाव से ध्याना।
'विशद' ज्ञान के द्वारा भाई, सिद्ध शिला को पाना।।4।।

संवेग भावना

है संसार अपार असीमित, पार नहीं पाया।
काल अनादि से प्राणी यह, जग में भरमाया।।
भय से हो भयभीत जानकर, इस जग की माया।
मंगलमय संवेग भाव बस, ये ही कहलाया।।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण को, सम्यक् धर्म कहा।
मोक्ष महल का सम्यक् साधन, अनुपम यही रहा।।
धर्म और उसके फल में जो, हर्ष भाव आवे।
सु संवेग भाव शास्त्रों में, ये ही कहलावे।।5।।

शक्तितस्तप भावना

राग आग से जलकर अब तक, यूँ ही काल बिताया।
परिणत हुए भोग विषयों को, हमने अपनाया।।
निज निधि को खोकर के हमने, पर पदार्थ पाये।
प्रकट दिखाई देते हैं पर, अपने–अपने गाये।।
पर परिणत से बचकर हमको, निज निधि को पाना।
छोड़ विकल्पों को अब सारे, निज को ही ध्याना।।
यथाशक्ति जो त्याग करे, वह मोक्ष मार्ग जानो।
जैनागम में त्याग शक्तिसः, इसी तरह मानो।।7।।

शक्तितस्त्याग भावना

काल अनादि से यह प्राणी, तन का दास रहा।
साथ निभायेगा यह मेरा, ये विश्वास रहा।।
प्यास बढ़ाता है पीने से, जैसे जल खारा।
मृगतृष्णा बढ़ती रहती है, मिले न जल धारा।।
पल–पल करके नर जीवन का, समय निकल जाता।
इन्द्रियरोध किये बिन भाई, मिले ना सुख साता।।
इच्छाओं का दमन करे, फिर महामंत्र जपना।
यथा शक्ति तप करना भाई, शक्तिसः तपना।।6।।

साधु समाधि भावना

काल अनादि से मिथ्यावश, जन्म मरण पाया।
निज शक्ति को भूल जगत् में, प्राणी भरमाया।।
आधि व्याधि अरु पद उपाधि में, नर जीवन खोया।
मोह की मदिरा पीकर भारी, कर्म बीज बोया।।
जन्म मरण होता है तन का, चेतन है ज्ञाता।
कर्म करेगा जैसा प्राणी, वैसा फल पाता।।
चेतन का ना अंत है कोई, ना ही आदी है।
श्रेष्ठ मरण औ सत् अनुभूति, साधु समाधि है।।8।।

वैय्यावृत्ती भावना

स्वारथ का संसार है भाई, सारा का सारा।
लालच की बहती है जग में, बड़ी तीव्र धारा।।
पर उपकार को भूल रहे हैं, इस जग के प्राणी।
पर में निज उपकार छुपा है, कहती जिनवाणी।।
साधक करे साधना अपनी, संयम के द्वारा।
रत्नत्रय अपने जीवन से, जिनको है प्यारा।।
विघ्न साधना में कोई भी, उनकी आ जावे।
वैय्यावृत्ती विघ्न दूर, करना ही कहलावे।।9।।

अर्हद् भक्ति भावना

चार घातिया कर्मनाशकर, 'विशद' ज्ञान पाये।
समोशरण की सभा में बैठे, अर्हत् कहलाये।।
दिव्य देशना जिनकी पावन, जग में उपकारी।
सुहित हेतु पाते इस जग के, सारे नर-नारी।।
अर्हत् होते हैं इस जग में, सद्गुण के दाता।
अतः सार्व कहलाए भगवन्, भविजन के त्राता।।
हो अनुराग गुणों में उनके, भाव सहित भाई।
अर्हत् भक्ति गुणीजनों ने, इसी तरह गाई।।10।।

आचार्य भक्ति भावना

दर्शन ज्ञान चरित तप साधक, वीर्यचरण धारी।
रत्नत्रय का पालन करते, गुरु पंचाचारी।।
भक्तों के हैं भाग्य विधाता, मुक्ती पद दाता।
शिक्षा दीक्षा देने वाले, जन-जन के त्राता।।
सत् संयम की इच्छा करके, गुरु के गुण गाते।
भाव सहित वंदन करने को, चरणों में जाते।।

गुरु चरणों की भक्ति जग में, होती सुख दानी।
गुणियों ने आचार्य भक्ति शुभ, इसी तरह मानी।।11।।

बहुश्रुत (उपाध्याय) भक्ति भावना

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, होते जो ज्ञाता।
सम्यक् दर्शन ज्ञान के गुरुवर, होते हैं दाता।।
संतों में जो श्रेष्ठ कहे हैं, समता के धारी।
ज्ञान ध्यान तप में रत रहते, ऋषिवर अनगारी।।
करते हैं उपदेश धर्म का, जो मंगलकारी।
संत दिगम्बर और निरम्बर, नीरस आहारी।।
उपाध्याय को जग भोगों से, पूर्ण विरक्ति है।
भाव सहित गुण गाना उनके, बहुश्रुत भक्ति है।।12।।

प्रवचन भक्ति भावना

द्रव्य भाव श्रुत के भावों में, तत्पर जो रहते।
घोर तपस्या करने वाले, परिषह भी सहते।।
चेतन का अनुभव जो करते, निर्मल चित्धारी।
चित् को निर्मल करने वाली, वाणी मनहारी।।
सप्त तत्व झंकृत होते हैं, जिनवाणी द्वारा।
दिव्य देशना निःसृत होती, जैसे जलधारा।।
जिस वाणी से जागृत होवे, चेतन शक्ति है।
'विशद' ज्ञान में वर्णित पावन, प्रवचन भक्ति है।।13।।

आवश्यकापरिहाणी भावना

नहीं कभी सत् कर्म किया है, जीवन व्यर्थ गया।
भूले हैं कर्त्तव्य स्वयं के, आती बड़ी दया।।
श्रावक के गुण क्या होते हैं, जाने नहीं कभी।
पाप व्यसन जो होते जग में, करते रहे सभी।।

होते क्या कर्त्तव्य हमारे, उनको पाना है।
व्रत संयम से जीवन अपना, हमें सजाना है।।
कर्त्तव्यों के पालन हेतु, भावों से भरना।
आवश्यकऽपरिहार भावना, सम्पूरण करना।।14।।

मार्ग प्रभावना भावना

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण यह, सम्यक् धर्म कहा।
काल अनादी से यह बन्धु, मोक्ष का मार्ग रहा।।
मोक्ष मार्ग पर आगे चलकर, और चलाना है।
मंजिल को जब तक न पाया, बढ़ते जाना है।।
महिमा अगम है जिन शासन की, कैसे उसे कहें।
संयम तप श्रद्धा भक्ति में, हरपल मगन रहें।।
मोक्ष मार्ग औ जैन धर्म की, महिमा जो गाई।
पथ प्रभावना सत् संतों ने, जग में फैलाई।।15।।

प्रवचन वत्सलत्व भावना

गाय का ज्यों बछड़े के प्रति, स्नेह अटल होता।
काय वचन और मन से शुभ, अनुराग विमल होता।।
स्वार्थ रहित साधर्मी जन से, जो अनुराग रहा।
श्री जिनेन्द्र ने जैनागम में, ये वात्सल्य कहा।।
द्वेष भाव के द्वारा हमने, कितने कष्ट सहे।
मद माया की लपटों में हम, जलते सदा रहे।।
सदियाँ गुजर गयीं हैं लेकिन, धर्म नहीं पाया।
चेतन की यह भूल रही, अरु रही मोह माया।।16।।

दोहा – शब्द अर्थ की भूल को, पढ़ना सुधी सुधार।
पंच परम गुरु के चरण, वंदन बारम्बार।।

इत्याशीर्वाद :।

सामायिक पाठ

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

तीन लोक के सब जीवों से, मेरा मैत्री भाव रहे।
गुणी जनों को देख हृदय में, प्रेम की सरिता नित्य बहेङ्क
दुःखी प्राणियों को लखकर के, उर में करुणा भाव जगे।
हो माध्यस्थ भाव उनके प्रति, अविनय में जो जीव लगेङ्क1ङ्क
हे जिनेन्द्र! तव कृपा प्राप्त कर, मुझमें ऐसी शक्ति जगे।
ज्यों तलवार म्यान से होती, भिन्न आत्मा मुझे लगेङ्क
है अनन्त शक्तिशाली जो, सर्व दोष से हैं निर्मूल।
तन से चेतन भिन्न करूँ मैं, क्षमता यह जागे अनुकूलङ्क2ङ्क
हे जिनेन्द्र! मेरे मन में शुभ, समता का संचार बहे।
पर पदार्थ में न ममत्व हो, निर्ममत्व का भाव रहेङ्क
वन में और भवन सुख दुःख में, शत्रु मित्र का हो संयोग।
या वियोग हो जाए स्वजन का, धारें समता का ही योगङ्क3ङ्क
हे मुनीश! तम के नाशक हो, दीपक सम तव दोय चरण।
लीन हुए सम या कीलित सम, अविचल मैं कर सकूँ वरणङ्क
स्थिर रहें उकेरे जैसे, मंगलमय शुभ मूर्ति समान।
हों आसीन हृदय में मेरे, नित्य करूँ मैं जिन का ध्यानङ्क4ङ्क
हे जिनेन्द्र! मैंने प्रमाद से, इधर उधर कीन्हा संचार।
एकेन्द्रिय आदि जीवों का, यदि हुआ होवे संहारङ्क
मले गये या चोट खाये हों, अलग-अलग जो हुए कहीं।
दुराचरण वह मिथ्या हो मम्, मैंने जाना उसे नहींङ्क5ङ्क
हे जिनेन्द्र! मुक्ति मारग के, किया आचरण जो प्रतिकूल।
वह कषाय इन्द्रिय विषयों के, वशीभूत हो हुई ये भूलङ्क
लोप हुआ चारित्र शुद्धि का, मुझ दुर्बुद्धि के द्वारा।
वह दुष्कृत मिथ्या हो जाए, हे स्वामी! मेरा साराङ्क6ङ्क

हे जिनेन्द्र! मैंने कषाय या, मन वच तन से कीन्हा पाप।
मैं निन्दा आलोचन द्वारा, करता उसका पश्चातापङ्क
ज्यों मंत्रों की शक्ति द्वारा, विष का करता वैद्य विनाश।
भव दुःख के कारण पापों का, त्यों मेरे हो जाए नाशङ्क7ङ्क

हे जिनेन्द्र! चारित्र क्रिया में, अतिक्रम हुआ रहा अज्ञान।
या प्रमाद से हुआ व्यतिक्रम, जिसमें हुई व्रतों की हानङ्क
अतिचार या अनाचार जो, मुझसे हुआ है हे भगवान!
उसकी शुद्धि हेतु करता, प्रतिक्रमण मैं करके ध्यानङ्क8ङ्क

हे जिनेन्द्र! ज्ञानी जन मन की, शुद्धि में क्षति को अतिक्रम।
शीलव्रतों के उल्लंघन को, कहते हैं वह तो व्यतिक्रमङ्क
विषयों में यदि होय प्रवर्तन, उसको कहते हैं अतिचार।
अनाचार अत्याशक्ति को, कहते आगम के अनुसारङ्क 9ङ्क

हे देवी! जिन सरस्वती यदि, मेरे द्वारा हुआ प्रमाद।
वाक्य अर्थ पद मात्रा का जो, किंचित् हीन हुआ उत्पादङ्क
वह अपराध क्षमा हो मेरा, देना हमको करुणा दान।
केवल ज्ञान रूप लब्धि अब, माता हमको करो प्रदान ङ्क 1ङ्क

हे देवी ! जिन सरस्वति तव, मन वाञ्छित फल की दाता।
चिंतामणि सम तुम को वन्दन, तव चरणों में सिर नाताङ्क
बोधि समाधि मुझे प्राप्त हो, परिणामों की हो शुद्धि।
निज स्वरूप की प्राप्ति हो अरु, मोक्ष सौख्य की हो सिद्धिङ्क 11ङ्क

मुनि नायक के वृंदों से जो, नित्य स्मरण योग्य कहे।
सुरपति नरपति जिनकी स्तुति, करने में तल्लीन रहेङ्क
वेद पुराण शास्त्र में गाए, वह मेरे देवाधिदेव।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजें श्री जिनदेव ङ्क12ङ्क

दर्श अनन्त ज्ञान को पाए, सुख स्वभाव में रहते लीन।
इस संसार के सभी विकारों, से जो रहते पूर्ण विहीनङ्क
जोसमाधि के गम्य रहे हैं, परमातम संज्ञा धारी।
वह देवों के देव हमारे, हृदय बसें मंगलकारीङ्क 13ङ्क

जो भव दुक्खों के समूह का, कर देता है पूर्ण विनाश।
और जगत् के अन्तराल का, ज्ञान में जिसके होय प्रकाशङ्क
योगी जन से प्रेक्षणीय जो, जिनका है लोकाग्र निवास।
वह देवों के देव कृपाकर, मेरे करें हृदय में वासङ्क 14ङ्क

मोक्ष मार्ग के प्रतिपादक हो, जन्म मरण दुःखों से हीन।
तीन लोक अवलोकन करते, जो शरीर से रहे विहीनङ्क
कर्म कलंक हीन होते जो, वह हैं देवों के भी देव।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजें श्री जिनदेवङ्क 15ङ्क

तीन लोकवर्ती जीवों को, व्याप्त करें रागादिक दोष।
दोष रहित वह कहे अतीन्द्रिय, ज्ञान मयी होते निर्दोषङ्क
जो अपाय से रहित लोक में, वह हैं देवों के भी देव।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजें श्री जिनदेवङ्क 16ङ्क

ज्ञेयापेक्षा व्यापक हैं जो, ज्ञायक स्वभावी हैं जो सिद्ध।
विश्व कल्याण की वृत्ति जिनकी, सर्वलोक में रही प्रसिद्धङ्क
कर्म बन्ध विध्वंसक ध्याता, सकल विकारों के नाशी।
वह देवों के देव हमारे, अन्तःपुर के हों वासीङ्क 17ङ्क

तम समूह ज्यों रवि किरणों को, कर सकता है न स्पर्श।
कर्म कलंक दोष त्यों जिनके, करते नहीं कभी भी दर्शङ्क
नित्य निरंजन जो अनेक इक, वह जिनवर हैं मेरे आप्त।
देवों के जो देव कहे हैं, उनकी शरण हमें हो प्राप्तङ्क 18ङ्क

भुवन भास्कर सूर्य कभी भी, शोभा पाता नहीं वहाँ।
विद्यमान रहते हैं अनुपम, प्रखर प्रकाशी प्रभु जहाँङ्क
निज आतम स्वरूप में स्थित, ज्ञान प्रकाशी रहे सदैव।
शरण प्राप्त करता मैं उनकी, आप्त कहे देवों के देवङ्क 19ङ्क

जिनके अवलोकन करने पर, सारा का सारा संसार।
पृथक-पृथक दिखता है इकदम, कोई किसी का न आधारङ्क

वह शिव शान्त स्वरूप सिद्ध जिन, तो हैं आदि अन्त विहीन।
आप्त देव की शरण प्राप्त कर, भक्ति में हो जाऊँ लीनङ्क 2ङ्क

वृक्ष समूह अग्नि के द्वारा, पूर्ण रूप हो जाता क्षय।
भय निद्रा मूर्छा दुख चिन्ता, शोकादि त्यों होय विलयङ्क
मान और मन्मथ आदि सब, दोषों से जो पूर्ण विहीन।
आप्त देव की शरण प्राप्त कर, भक्ति में हो जाऊँलीनङ्क 21ङ्क

परम समाधि के विधान में, न संस्तर है न पाषाण।
न तृण पुंज और न पृथ्वी, नव निर्मित न फलक महान्ङ्क
क्योंकि बुद्धीमानों द्वारा, विषय कषाय शत्रु से हीन।
निर्मल आतम ही समाधि के, मानी योग्य पूर्ण स्वाधीन ङ्क22ङ्क

हे भद्र! नहीं है संस्तर क्योंकि, नहीं लोक पूजा मनहार।
नहीं संघ सम्मेलन अनुपम, परम समाधि का आधारङ्क
इसीलिए तुम सब प्रकार से, बाह्य वासना को छोड़ो।
नित्य प्रतिदिन आत्म निरत हो, अध्यातम से नाता जोड़ोङ्क 23ङ्क

हे भद्र! नहीं है मेरे कोई, जो भी बाह्य पदार्थ रहे।
नहीं कदापि मैं उनका हूँ, कोई कुछ भी हमें कहेङ्क
इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके, बाह्य की तुम संगति छोड़ो।
नित्य प्रति अब निज आतम से, अपना तुम नाता जोड़ोङ्क 24ङ्क

निज आतम को निज आतम से, करना भाई अवलोकन।
निश्चय से सद्ज्ञान युक्त हो, और सहित हो सद्दर्शनङ्क
जहाँ कभी भी स्थित साधु, मोहादि सब करें समाप्त।
हो विशुद्ध एकाग्र चित्त वह, परम समाधि करते प्राप्तङ्क 25ङ्क

मम आतम है एक हमेशा, है अधिगम स्वभाव संयुक्त।
जो शाश्वत है परम सुनिर्मल, अन्य सभी से रहा वियुक्तङ्क
बाह्य पदार्थ रहे जो कुछ भी, नहीं है अपने शाश्वत रूप।
कर्म जनित होते हैं सब ही, जिनवर कहते वस्तु स्वरूपङ्क 26ङ्क

चर्म अलग कर देने पर ज्यों, इस शरीर के मध्य कभी।
रोम छिद्र निश्चय से उसमें, कहाँ रहेंगे कहो सभीङ्क
इस शरीर के साथ भी जिसका, एक्यपना है नहीं कदा।
स्त्री पुत्र मित्र में उसका, कैसे सम्भव ऐक्य तदाङ्क 27ङ्क

भव वन में संसारी प्राणी, क्योंकि पाते हैं संयोग।
इस कारण से कई प्रकार के, पावे दुःखों का वह योगङ्क
इसीलिए कल्याण कारिणी, मुक्ति के इच्छाकारी।
मन वच तन से वह संयोगों, को छोड़ें हो अविकारी ङ्क 28ङ्क

भव कान्तार में शीघ्र पतन के, कारण जो भी रहे प्रधान।
उन विकल्प जालों का बन्धु, पूर्ण रूप करके अवसानङ्क
एक मात्र आतम को भाई, सदा देखते हुए अहो।
निज परमात्म तत्व में बन्धु, सदा स्वयं ही लीन रहोङ्क 29ङ्क

स्वयं किए जो कर्म पूर्व में, पहले अपने ही द्वारा।
उनका फल स्पष्ट रूप से, मिले शुभाशुभ ही साराङ्क
यदि और का दिया गया फल, सुखमय रूप में होवे प्राप्त।
तो फिर स्वयं किए कर्मों का, हो जाएगा व्यर्थ समाप्त ङ्क 3ङ्क

स्वयं उपार्जित कर्म छोड़कर, कोई किसी के लिए कभी।
किंचित् भी दे सके कभी न, ऐसा सोचो जीव सभीङ्क
अहो आत्मन्! पर कोई दाता, ऐसी बुद्धि तुम छोड़ो।
हो एकाग्र चित्त हे बन्धु! निज से अब नाता जोड़ोङ्क 31ङ्क

अमित गति से वन्दनीय जो, पुरुष लोक में कर्म विहीन।
अति निर्दोष परम परमातम, मन से ध्याते होकर लीनङ्क
वैभव वाले परम पुरुष वह, मोक्ष महल को करते प्राप्त।
अष्ट कर्म का नाश करें वह, बनते अल्प समय में आप्तङ्क 32ङ्क

जो एकाग्र चित्त होकर इन, बत्तिस पद्यों को सम्प्राप्त।
परमातम को देख रहे वह, अविनाशी पद करते प्राप्तङ्क 33ङ्क

●●●

श्री जिन स्तवन

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

आदिनाथ ने आदि में, खोला मुक्ति द्वार।
अष्ट कर्म का नाश कर, आप हुए भव पारङ्क
आप हुए भव पार, पहुँच गये सिद्ध शिला पर।
पाया पद निर्वाण, जले थे दीपक घर-घरङ्क
विशद सिन्धु का नमन् है, जिनवर के पद आज।
षट् कर्मों का दे गये, हम सबको यह राजङ्क1ङ्क

अजित नाथ ने जीतकर, किया कर्म का नाश।
सिद्ध शिला पर किया है, अपना स्वयं निवासङ्क
अपना स्वयं निवास, हो गये आप निः श्रेयस।
फैला है इस लोक में, जिनवर का शुभ श्रेयसङ्क
विशद सिन्धु अब खड़ा है, करे चरण अरदास।
कर्म नाश कर हो शुभम्, मेरा मुक्ति वासङ्क2ङ्क

कार्य असम्भव कर लिए, सम्भव सारे आप।
भाग चले हैं स्वयं ही, जिनके सारे पापङ्क
जिनके सारे पाप, हुए हैं, जो अविकारी।
पाया है सद्-धर्म, हुए शिव के अधिकारीङ्क
विशद ज्ञान सम्भव करो, मुझको आप प्रदान।
अपने पद का दीजिए, हाथ उठा वरदानङ्क3ङ्क

अभिनन्दन वन्दन करूँ, पद में शत्-शत् बार।
अलग किया है आपने, सिर का अपना भारङ्क
सिर का अपना भार, बैठ गये आप गगन में।
दिव्य कमल रचने लगे, प्रभु के पाद चरण मेंङ्क

विशद सिन्धु वन्दन करें, करो कर्म से रिक्त।
वीतरागता का बनूँ, स्वयं अद्वितीय भक्तङ्क4ङ्क

सुमति प्राप्त कर सुमति से, सुमति हुए जिनराज।
सुमतिनाथ जी लोक में, तारण-तरण जहाजङ्क
तारण-तरण जहाज, पार करते इस जग से।
सु-मति निःश्रित होय, नित्य भक्तों के रग-रग सेङ्क
विशद सिन्धु की शक्ति को, कर दो सुमति विशेष।
भेष त्यागकर लोक के, धारें जिनवर भेषङ्क5ङ्क

पद्म प्रभु का पद्म रंग, पद्म चिह्न शुभ अंग।
पाकर मंग उमंग से, हो गये आप अनंगङ्क
हो गये आप अनंग, रमण शिव गंग में करते।
पा करके शिव गंग से, घर औरों का भरतेङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं तुम, शिव गंग नहाओ।
हो करके निः संग आप, शिव गंग को पाओङ्क6ङ्क

हरित वर्ण से शोभते, प्रभो! सुपारसनाथ।
उनके चरणों झुकाते, इन्द्र सैकड़ों माथङ्क
इन्द्र सैंकड़ों माथ, चरण में नम्र हुये हैं।
श्रद्धा भक्ति समेत, प्रभु के चरण छुये हैंङ्क
विशद सिन्धु चरणों करते, हैं शत्-शत् वंदन।
देकर शुभ आशीष, मैट दो भव आक्रन्दनङ्क7ङ्क

कांति चन्द्र समान है, चिह्न भी जिनका चन्द्र।
चरणों में वन्दन करें, सुर नर इन्द्र नरेन्द्रङ्क
सुर नर इन्द्र नरेन्द्र, सभी के हैं प्रभु ईश्वर।
हुए त्रिलोकीनाथ, धरा पर आप महीश्वरङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भैया, ज्ञान जगाओ।
चन्द्रप्रभु के चरणों में, वंदन को आओङ्क8ङ्क

सुविधि नाथ ने विधि से, विशद लगाया ध्यान।
ज्ञान ध्यान तपकर स्वयं, पाया केवल ज्ञानङ्क
पाया केवलज्ञान, हुए प्रभु केवलज्ञानी।
प्रहसित हुई सर्वांग से, स्वयं ही जिनवर वाणीङ्क
विशद सिन्धु कहते सभी, करो प्रभु गुणगान।
मोक्ष महल तब ही मिले, तुमको शीघ्र महानङ्क9ङ्क

शीतल जिन शीतल हुए, भव संताप विनाश।
लोक शिखर पर किया है, जाकर प्रभु ने वासङ्क
जाकर प्रभु ने वास, हुये नर से नारायण।
चरणों की रज पाकर, हुआ है पावन कण-कणङ्क
विशद सिन्धु जिन पद रज को, हम माथ चढ़ाते।
पावन हो जाते वह भी, जो चरणों में जातेङ्क10ङ्क

अश्रेयस को पा गये, श्री श्रेयांश जिनराज।
चरण शरण को प्राप्त कर, करते हैं हम नाजङ्क
करते हैं हम नाज, धन्य हैं शरण को पाकर।
स्वयं का करते ध्यान, चरण में उनके जाकरङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं, अश्रेयस को पाने
ध्यान करें प्रभु पद में, अपना समय बितानेङ्क11ङ्क

वासुपूज्य जग पूज्य हैं, नहिं नारायण पूज्य।
दुर्गुण से होता स्वयं, जग में जीव अपूज्यङ्क
जग में जीव अपूज्य, त्यागिए सारे दुर्गुण।
बनना चाहो पूज्य तो, भाई धारो सद्‌गुणङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं, प्रभु की पूजा करना।
पूजा भक्ति करके यह, भव सागर तरनाङ्क12ङ्क

विमल नाथ मल से रहित, किया कर्म का नाश।
स्वभाविक गुण का किया, प्रभु ने पूर्ण विकाशङ्क
प्रभु ने पूर्ण विकाश, आत्म को शुद्ध किया है।
वैभव नश्वर जान, जगत् को छोड़ दिया हैङ्क
विशद सिंधु यह वैभव, सारा नश्वर होता।
वैभव के चक्कर में प्राणी, निज के सद्‌गुण खोताङ्क13ङ्क

भव सागर का अंत कर, पाया ज्ञान अनंत।
प्रकट किये गुण आपने, स्वयं अनंतानंतङ्क
स्वयं अनन्तानंत, हुए हैं अन्तर्यामी।
सिद्‌ध शिला के आप, हुए हैं जाकर स्वामीङ्क
विशद सिंधु करते हैं, प्रभु पद में अभिनंदन।
अनंत नाथ के चरणों में, हो शत्-शत् वंदनङ्क14ङ्क

धर्मनाथ सद्‌धर्म का, देते सत् उपदेश।
पूज्यनीय है लोक में, वीतराग शुभ भेषङ्क
वीतराग शुभ भेष, यही है मोक्ष का मारग।
मुक्ति पाते आप, स्वयं जो ज्ञान में पारगङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं, भाई ज्ञान जगाओ।
पाकर केवल ज्ञान, आप भी मुक्ति पाओङ्क 15ङ्क

शान्ति नाथ ने प्राप्त की, शान्ति जगत् प्रसिद्ध।
कर्म नाश करके हुए, आप स्वयं ही सिद्धङ्क
आप स्वयं ही सिद्ध, हुए हैं जग के ज्ञाता।
विधि को जानें आप, हुए हैं विशद विधाताङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं, शांति हम भी चाहें।
शांति हेतु खड़े हैं, हम फैलाए बाहेंङ्क16ङ्क

कुन्थुनाथ जिनवर हुए, चक्रवर्ति से भूप।
कामदेव पद से हुआ, जिनका रूप अनूपङ्क
जिनका रूप अनूप, भूप कई दास बने थे।
पुण्य उदय के बादल, छाए बहुत घने थेङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं, ऐसा पुण्य कमाओ।
जग वैभव को भोग, बाद में मुक्ति पाओङ्क17ङ्क

अरहनाथ जिनवर परम, कामदेव तीर्थेश।
चक्रवर्ती पद छोड़कर, धरा दिगम्बर भेषङ्क
धरा दिगम्बर भेष, कि आतम ध्यान लगाया।
कुछ ही दिन के बाद, ज्ञान केवल भी पायाङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भाई, भेष ये धारो।
जैनधर्म की ध्वजा हाथ में, आप सम्हारोङ्क 18ङ्क

मल्लिनाथ ने जीतकर, कर्म किए निर्मूल।
भव सागर से पा गये, आप स्वयं ही कूलङ्क
आप स्वयं ही कूल, भूल थी आप सुधारी।
पाकर केवल ज्ञान हुए, प्रभु गगन विहारीङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भाई, भूल न करना।
संयम से हो मुक्ति पड़े न, फिर-फिर मरनाङ्क 19ङ्क

मुनिसुव्रत ने व्रत किए, स्वयं ही अंगीकार।
छोड़ चले घर बार सब, त्याग दिया आगारङ्क
त्याग दिया आगार, बने अनगारी जाकर।
वन में जाके बैठ गये, शुभ ध्यान लगाकरङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भाई, ध्यान हो पावन।
हो संताप विनाश, स्वयं आ जाये सावनङ्क 2ङ्क

{deX^{º$nr`yf lr {OZ ñVdZ

नेमीनाथ जिनदेव ने, पाया केवल ज्ञान।
कर्म घातिया नाश कर, हुआ आत्म का भानङ्क
हुआ आत्म का भान, हुए प्रभु नित्य निरंजन।
सिद्ध शुद्ध हो गये आप, करके भव भञ्जनङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भैया, नमि जिन ध्याओ।
द्रव्य भाव नौ कर्म नाश, मुक्ति को पाओङ्क 21ङ्क

नेमिनाथ ने ध्यान की, नेमि सम्हारी हाथ।
विशद ज्ञान को प्राप्त कर, हो गये नेमीनाथङ्क
हो गये नेमीनाथ, गये गिरनार पहाड़ी।
निज वैभव को पाय, कर्म की गति बिगाड़ीङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं भैया, कर्म नशाने।
है संसार असार हमें अब, मुक्ति पानेङ्क 22ङ्क

पार्श्वनाथ के माथ पर, हुआ घोर उपसर्ग।
ध्यान के द्वारा पा लिया, आप स्वयं अपवर्गङ्क
आप स्वयं अपवर्ग, पार्श्व मणि आप बने हैं।
कर्म घातिया चार, शीघ्र ही आप हने हैंङ्क
विशद सिन्धु कहते हैं पाऊँ, चरण सहारा।
चरणों में शत्-शत् वन्दन हो, नमन् हमाराङ्क 23ङ्क

वर्धमान सन्मति बने, बना बाल या वीर।
सन्मतिसे अतिवीर बन, संयम से महावीरङ्क
संयम से महावीर, मोक्ष की मन में ठानी।
केवल ज्ञानी बने प्राप्त की मुक्ति रानीङ्क
विशद सिंधु कहते है, गौतम स्वामी आये।
मान त्याग प्रभु चरणों में, वह शीष झुकाएङ्क24ङ्क

●●●

चौबीस तीर्थंकर स्तवन

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

आदि जिन से हुआ, आदि जिन धर्म का।
दिया संदेश प्रभु ने, हमें कर्म काङ्क
आदि जिन हो गये, जग में तारण तरण।
उनके चरणों में हो, मेरा शत्-शत् नमन्ङ्क1ङ्क

जीतना कर्म का, नहीं होता सरल।
कर्म को जीतने वाले, होते विरलङ्क
जीते हैं कर्म को, श्री अजितनाथ जिन।
बन सकूं मैं अजित, विशद करता नमन्ङ्क2ङ्क

कर असम्भव को सम्भव, हुए आप जिन।
कर्म नाशी कहो, कौन हैं आप बिनङ्क
तुमसा बनने को आये हैं, हम तव चरन।
सम्भव जिनके चरण में, विशद हो नमन्ङ्क3ङ्क

अभिनन्दन जिन हुए, लोक में श्रेष्ठतम।
गुण प्रकट कर लिए, सब नहीं कोई कमङ्क
कर रहा मैं नमन्, सतत् प्रभु दो शरण।
तव चरण में करूँ, विशद शत्-शत् नमन्ङ्क4ङ्क

मति जिनकी हुई है, सुमति धर्म से।
हो गये हैं रहित, जो वसू कर्म सेङ्क
शांति पायेंगे जो, करते प्रभू का मनन्।
उनके चरणों में हो, विशद सिरसः नमन्ङ्क 5ङ्क

पद्म पर शोभते, पद्म प्रभु पद्म रंग।
वह गगन में विराजे, चतुष्टय के संगङ्क

कर्म का कर रहे, हम सभी के शमन।
पद्म करके समर्पित, विशद हो नमन्ङ्क6ङ्क

हे सुपारस प्रभो! शुभ मुझे दर्श दो।
सद् चरण का मुझे, आप स्पर्श दोङ्क
ना मिले शांति हमको, प्रभु दर्श बिन।
नमन् करते विशद, पाने को तव चरणङ्क7ङ्क

चन्द्र सम कान्ति है, चिन्ह भी चन्द्र है।
तव चरण में नमन, करते शत इन्द्र हैंङ्क
भक्ति करने को आते, सभी साथ हैं।
तव चरण में विशद, मम झुका माथ हैङ्क8ङ्क

विधि को सुविधि कर, सुविधि जिन हुए।
लोक के शीष को, आप जाकर छुएङ्क
सन्त हो अन्तकर, कन्त शिव के परम।
तव चरण द्वय में हो, विशद सिरसः नमन्ङ्क9ङ्क

शील को पूर्ण कर, ज्ञान की झील में।
शांति से खो गये हैं, स्वयं शील मेंङ्क
प्रभु शीतल करो, मेरा जीवन चमनङ्क
तव चरण में विशद, करूँ ज्ञानाचरणङ्क्षोङ्क

स्वयं से स्वयं को, स्वयं ही पा गये।
स्वयं से स्वयं पर, स्वयं जो छा गयेङ्क
श्रेय पाकर हुए निःश्रेयस श्रेयांश जिन।
जिनके दोनों चरण में विशद शुभ नमन्ङ्क 11ङ्क

आपने आपको, आपमें वर लिया।
ज्ञान केवल स्वयं में, प्रकट कर लियाङ्क
स्वयं ही स्वयं में, कर रहे हैं रमण।
वासुपूज्य प्रभु पद, में हो सिरसः नमन्ङ्क 12ङ्क

त्याग मल कर्म का, हो गये हैं अमल।
ज्ञान पाकर विशद, बना आसन कमलङ्क
विमल दो ज्ञान हमको, हे! विमल जिन।
विमल जिन के चरण में, हो शत्-शत् नमनङ्क13ङ्क

सन्त बनकर किया, लोक का अन्त है।
ज्ञानधारी विशद जिन, हुये अनन्त हैंङ्क
हो गये हैं जहाँ में, जो तारण-तरण।
जिन चरण में विशद, करें शत्-शत् नमनङ्क 14ङ्क

धर्म से धर्म में, धर्म मय हो गये।
धर्म मय हो धरम में, स्वयं खो गयेङ्क
धर्म जिन दो मुझे, धर्म शुभ जिन परम्।
धर्म जिन के चरण में, हो सिरसः नमनङ्क 15ङ्क

शांति को शांति से, पा गये शांति जिन।
बीते हैं शांति से, जिन्दगी के भी दिनङ्क
शांति जिन की मिले, शांति से शत् शरण।
द्वय चरण में विशद, शांति जिनके नमनङ्क 16ङ्क

कुन्थु जिन कुन्थु आदिक, सभी के प्रभु।
नर खचर सुर पशु जिन, सभी के विभुङ्क
कुन्थु जिनके चरण में, हो सिरसः नमन्।
राह पर कुन्थु जिन की, करूँ मैं गमनङ्क17ङ्क

विरह हो कर्म से, स्वयं ही इस तरह।
दोष का कर सकें, नाश श्री जिन अरहङ्क
पा सकूँ मैं प्रभु, जिन अरह की शरण।
तव चरण में विशद, मेरा सिरसः नमनङ्क18ङ्क

मोह के मल्ल को, मल्लि जिन जीतकर।
कर्म को वीरता से, भयभीत करङ्क
मल्लों में मल्ल हो गये, हैं जिन परम।
मल्लि जिन के चरण, विशद सिरसः नमनङ्क 19ङ्क

ज्ञान से ज्ञान पाकर, हुए ज्ञानधर।
दृष्टा ज्ञाता हुए, प्रभु जी दर्श करङ्क
श्री मुनिसुव्रत नाथ जिन, दीजे ज्ञानाचरण ।
तव चरण में करें, विशद सिरसः नमनङ्क2ङ्क

नृप विजय के हैं सुत, बहुत ही श्रेष्ठतम।
सद्‌गुणों में हैं जो, लोक में ज्येष्ठतमङ्क
सब कमी दूर करके, हुए नमि जिन।
तव चरण में विशद, मेरा शत्-शत् नमनङ्क21ङ्क

कर्म घाती किये, नाश तुमने प्रभु।
पा चतुष्टय हुये हैं, स्वयं ही विभुङ्क
मिट गया नेमि का, भाई जामन मरण।
चरण वन्दन करूँ, विशद पाऊँ शरणङ्क22ङ्क

ज्ञान ज्योति जली, पार्श्व के नाम पर।
बन गये पार्श्व जिन, ये शुभम कार्य करङ्क
पार्श्व जिन हैं विशद, जग में तारण तरण।
हे प्रभो! तव चरण हो, समाधि मरणङ्क23ङ्क

सद्‌मति प्राप्त कर, सन्मति हो गये।
स्वयं से स्वयं में, स्वयं ही खो गयेङ्क
हो मति सन्मति, हे महावीर जिन।
तव चरण द्वय में हो, विशद सिरसः नमनङ्क24ङ्क

अर्हन्त वंदना

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

(सवैया छन्द)

आदि में काल के, आदिकर धर्म का।
अतः प्रभु आदिनाथ, आदि जिन कहाए हैंङ्क
ज्ञान ध्यान तप से, ज्ञान विशद पायकर।
ज्ञान के अमृत की, धार शुभ बहाए हैंङ्क
भव्य भक्त आन के, भक्ती में लीन हों।
वीतराग वाणी की, गंग में नहाए हैंङ्क
मिला नहीं कहीं वास, मोक्ष की जगी है आस।
विशद सिन्धु चरणों में, शीष ये झुकाए हैंङ्क 1ङ्क

जीतकर सारे कर्म, पाए है अनन्त शर्म।
केवल ज्ञान अपने, हृदय में सजाए हैंङ्क
वीतरागता को धार, संयम को हृदय उतार।
अनन्त ज्ञान दर्शन सुख, वीर प्रभु पाए हैंङ्क
ज्ञान की ले मशाल, पुण्य जगा है विशाल।
समवशरण आनकर, देव शुभ बनाए हैंङ्क
विशद ज्ञान पाय, अजित नाथ छाए लोक में।
अजितनाथ के पद में, शीष हम झुकाए हैंङ्क2ङ्क

कठिन कार्य ना विचार, चले मोक्ष मार्ग पे।
वीतराग धर्म की, ध्वजा आप धारी हैङ्क
कार्य था असम्भव जो, सम्भव कर लिये आप।
गगन के प्रभु आप, बने शुभ विहारी हैंङ्क
पग तले देव आन, कमल शुभ रचाए कई।
भक्तों ने आकर के, आरती उतारी हैङ्क

मोक्ष लक्ष्मी के पास, चल दिए सम्भवनाथ।
प्रभु पाद में विशद, वन्दना हमारी हैङ्क3ङ्क

चन्दन सम शीतल जिन, अभिनन्दन नाथ हैं।
वाणी की शीतलता, जग को लुटाए हैंङ्क
स्वर्ण सी देह गेह, लोक में जो अनुपम हैं।
स्वयं से स्वयं को, स्वयं ही लखाए हैंङ्क
वन्दन करें लोक के, सारे जीव आन के।
इन्द्र धरणेन्द्र सभी, भक्ति में आए हैंङ्क
अभिनन्दन नाथ जिन, आए हम शरण आज।
चरणों में तव विशद, शीष हम झुकाए हैंङ्क 4ङ्क

कुमति को त्याग संग, मति को सु मति कर।
खग चिन्ह पग में, सुमति जिन के पाए हैंङ्क
पाँचवें हैं अर्हन्त, मुक्तिवधु के हैं कन्त।
ऋषि मुनि यति जिनके, चरणों में आए हैंङ्क
कर्म के कराल काल, उनके भी जान हाल।
वीतराग विज्ञान, से सब नशाये हैंङ्क
सुमति नाथ जोड़ हाथ, चरणों में झुका माथ।
वन्दना के हेतु विशद, भाव सहित आये हैंङ्क5ङ्क

पद्मप्रभु के सुपाद, पद्म चिन्ह शोभता है।
पद्म रंग सहित प्रभु, जग में महान हैंङ्क
पद्मप्रभु के सुपाद, पद्म से कर वन्दना।
हृदय पद्म पर, प्रभु पद्म का ही ध्यान हैङ्क
पद्मप्रभु पद में शुभ, पद्म सुर रचाते हैं।
पद्मप्रभु का पद्म, पर ही स्थान हैङ्क

पद्म प्रभु पाद में, सिरसः नमन् करूँ।
पद्म प्रभु पाद पद्म, जग में प्रधान हैंङ्क6ङ्क

पार्श्व हैं सुपार्श्व जिन, पूजते पादार विन्द।
तीन लोक पूज्य, आप पाये विशद ज्ञान हैंङ्क
पार्श्व जिन सुपार्श्व की, वाणी जिनवाणी है।
आगम के ज्ञान से, जग का कल्याण हैङ्क
चाहूँ में ज्ञान ध्यान, तप और आचरण।
तीन लोक तीन काल, में जो महान हैंङ्क
हे सुपार्श्व पार्श्व देव, ज्ञान पाये हैं स्वमेव।
ज्ञान पाने हेतु विशद, चरणों प्रणाम हैङ्क7ङ्क

चन्द्र में तो दाग प्रभु, चन्द्र बे दाग हैं।
चन्द्र का प्रकाश अल्प, प्रभु का अपार हैङ्क
चाँद में तो हीनता है, दीनता से पूर्ण है।
चन्द्र प्रभु के गुणों का, नहीं कोई पार हैङ्क
चन्द्रमा परिक्रमा, करता सुमेरु की।
चन्द्र प्रभु का, नहीं कोई आधार हैङ्क
चन्द्र प्रभु चाहना, ये और कुछ चाह ना।
करूँ चरण वन्दना, तेरी जय जयकार हैङ्क8ङ्क

बन के संत पुष्पदन्त, कर्मों का किए अन्त।
होकर के निष्कर्म, मोक्ष को सिधाए हैंङ्क
मेरे प्रभु पुष्पदन्त, पावन हैं भगवन्त।
तव पद में भाव पुष्प, लेकर हम आये हैंङ्क
मुक्ति वधु के हे! कन्त, श्री जिन जी अर्हन्त।
तेरे गुण गान में, मन ये लगाए हैंङ्क

प्रभु तू है गुणवन्त, तेरे गुण हैं अनन्त।
विशद गुण पाने हेतु, सर ये झुकाए हैंङ्क9ङ्क

जल को स्वभाव से, शीतल बताय रहे।
शीतल नाथ जल से भी, शीतल बताए हैंङ्क
कल्पतरु कल्पना, पूर्ण करे जीव की।
कल्प वृक्ष प्रभु के, पग में दिखाए हैंङ्क
नहीं कल्पना है जिसकी, पूर्ण इस लोक में।
मोक्ष का महल वह, शीतल जिन पाए हैंङ्क
महाफल मोक्ष का, चाह रहे हैं विशद।
अतः तव चरण में, शीष हम झुकाए हैंङ्क10ङ्क

श्रेय से अश्रेयस को, श्रेय जिन पाय रहे।
पाना अश्रेयस को, श्रेय का परिणाम हैङ्क
श्रेयस-अश्रेयस की, चाह जगी है मन में।
करना है ध्वस्त, लगा आया जो राग हैङ्क
देह त्याग गेह त्याग, श्रेय जिन के मूल में।
पाना विशद जग से अब, हमको विश्राम हैङ्क
श्रेय जिन करुणाकर, कृपा दृष्टि कीजिए।
चरणों में शत्-शत्, प्रभु के प्रणाम हैङ्क11ङ्क

वसु पूज्य के सुपुत्र, वासुपूज्य बन्धुओ।
पाकर के ज्ञान विशद, इस जग में छाए हैंङ्क
वासुपूज्य पूज्य हुए, सुर नर अरु केहरि से।
पाँचों कल्याणक प्रभु, चम्पापुर में पाये हैंङ्क
भैसा का चिन्ह दाहिने पैर में शुभ।
लाल रंग तन का है, घट-घट समाए हैंङ्क

वासु पूज्य पूज्यता, पाए सद्ज्ञान से।
ज्ञान विशद पाने को, सिर हम झुकाए हैंङ्क12ङ्क

दल बल को छोड़ के, नाते सब तोड़के।
जग से मुख मोड़के, वन को सिधाये हैंङ्क
कलमल का गालन कर, अमल अरु विमल हो।
निर्मल कमल पर जो, आसन जमाए हैंङ्क
ज्ञान से विज्ञान से, अज्ञान को नाश के।
औदारिक तन परम, स्वर्ण जैसा पाये हैंङ्क
जोड़कर के दोनों हाथ, प्रभु जी विमलनाथ।
चरणों में शीष विशद, अपना झुकाए हैंङ्क13ङ्क

कर्मों का किए अन्त, मुक्ति के बने कन्त।
भव का जो किए अन्त, अनन्त जिन नाम हैंङ्क
ज्ञान विशद पाकर के, श्री से श्रृंगारित हैं।
दिव्य ध्वनि खिरती शुभ, चारों ही याम हैंङ्क
आश्रव का रोध कर, योग का निरोध कर।
सिद्ध शिला के ऊपर, आपका शुभ धाम हैङ्क
श्री जिनेश तीर्थेश, अनन्त नाथ पाद में।
त्रिय भक्ति युक्त मेरा, विशद प्रणाम हैङ्क14ङ्क

अधर्म को कर्म को, नर्म कर धर्म से।
अनन्त शर्म को, धर्म नाथ जिन पाए हैंङ्क
धर्म के मर्म को, धर्म को सुधर्म को।
धर्म बुद्धि से हम, प्रभु गुण गाए हैंङ्क
संत हैं अनन्त हैं, धर्म भगवन्त हैं।
भाव से स्वभाव से, हृदय में समाए हैंङ्क

नित्य हैं निराकार, साकार धर्म जिन।
चरणों में उनके विशद, लौ हम लगाए हैंङ्क15ङ्क

शान्ति जिन शान्ति को, शान्ति से पाय रहे।
शान्ति नाम बन्धुओ, बहुत ही प्यारा हैङ्क
कर्म से सताये जीव, लोक में भटकते।
शान्ति जिन का उन, सब को सहारा हैङ्क
शान्ति जिन लोक में, तारण तरण कहे।
शान्ति जिन ने कई, भव्यों को तारा हैङ्क
शान्ति जिन की शरण, में सब हम आय गये।
शान्ति जिन के पद में, नमन् हमारा हैङ्क16ङ्क

चक्री थे कामदेव, तीर्थेश कुन्थु जिन।
तीन पद एक साथ, का ना विधान हैङ्क
काल दोष पाकर के, पाए हैं आपने।
सारा ही पुण्य का, पाया निधान हैङ्क
देह का वर्ण स्वर्ण, जैसा है चमकता।
अज चिन्ह से कुन्थु, जिन की पहिचान हैङ्क
शत्-शत् नमन् विशद, आपके चरण में।
कुन्थु जिन आप तो, जग में महान् हैंङ्क17ङ्क

श्री जिन अरह ने, विरह कर कर्म का।
इस तरह आप स्वयं, किया उद्धार हैंङ्क
ज्ञान विशद प्राप्त कर, दिव्य देशना से।
लोक में प्राणियों का, किया उपकार हैङ्क
पुण्य के उदय से, भव्य आत्मन् के।
प्रभु ने कई जगह, किया सुविहार हैङ्क

सुगुण प्राप्त किए जो, आपने वह दीजिए।
प्रभु तव चरणों में, नमन् सत् बार हैङ्क18ङ्क

मल्लिनाथ माथ झुका, रहे हम जोड़ हाथ।
मोक्ष मार्ग की हमें, राह दिखलाइयेङ्क
नाथ साथ-साथ हमें, चरणों की छाहँ में।
देकर स्थान प्रभु, अपनी बैठाइयेङ्क
देश-देश भेष-भेष, पाए कई लोक में।
मल्लिनाथ हमको अब, अधिक ना सताइयेङ्क
विशद सिन्धु हाथ जोड़, झुका रहा माथ ये।
हाथ उठा शुभ, आशीष देते जाइयेङ्क19ङ्क

व्रत लिए धार कई, बार बिन ज्ञान के।
आस्था से व्रत, मुनिसुव्रत दिलाइयेङ्क
आस्था से वास्ता बिन, मिला नहीं रास्ता।
मोक्ष के महल का, अब रास्ता दिखाइयेङ्क
जहाँ से चले हम, पहुँचे कई बार वहाँ।
नरक अरु निगोद के ना, चक्कर कटाइयेङ्क
आस्था अरु ज्ञान विशद, श्री अरहंत जिन।
देकर के मोक्ष की अब, यात्रा कराइयेङ्क2ङ्क

नीर से विमल अरु, क्षीर से मधुर आप।
नेमीनाथ जिन क्षीर, सागर से गम्भीर हैंङ्क
संतों में महासंत, हुए भगवन्त आप।
मुक्ति रमा के कंत, अनन्त बलवीर हैंङ्क
नीलकमल चिन्ह से, शोभते हैं नमी जिन।
तपे हुए स्वर्ण जैसा, सुन्दर शरीर हैङ्क
विशद पाद पद्म तव, पखारते हैं भाव से।
अपनी दोनों आँखों में, लिए खड़े नीर हैंङ्क21ङ्क

पैर के अंगूठे से, चक्र को चलाए आप।
श्वाँस लेके नाक से, शंख को बजाए हैंङ्क
देख रुदन पशुओं का, आम्र वन बीच में।
केशलुञ्च करके शुभ, दीक्षा को पाए हैंङ्क
नेमिनाथ साथ में, मोक्ष गये संत कई।
दीक्षा की भावना से, साथ चले आये हैंङ्क
चरणों में नेमीनाथ, झुका रहे विशद माथ।
संयम दिलाओ नाथ!, चरणों में आये हैंङ्क22ङ्क

पार्श्व जिन पार्श्वमणी, बने ज्ञान ध्यान से।
पार्श्वजिन को अपने, हृदय में बसाए हैंङ्क
हरा रंग देह का, अन्त नहीं गेह का।
दृश्य तीन लोक के, ज्ञान में दिखाए हैंङ्क
नाग प्रभु शीष पर, फण को फैलाए रहा।
नाग चिन्ह प्रभु के, पाद में बनाए हैंङ्क
पार्श्वनाथ पद में, आश लिए आए हम।
ज्ञान विशद पाने को, शीष हम झुकाए हैंङ्क23ङ्क

वीर महावीर स्वामी, धीर अतिवीर हैं।
वर्द्धमान हैं महान आप अतिधीर हैंङ्क
भारती के मूल आप, जग के अनुकूल आप।
धर्म के हों फूल आप, सागर से गम्भीर हैंङ्क
पराक्रम है शेर सा, चिन्ह पग शेर का।
सिंह पाद झुके आन, भव के जो तीर हैंङ्क
मोक्षमार्ग हो गमन, मिट जाए भव भ्रमण।
'विशद' कर्म हों शमन, जय-जय महावीर हैंङ्क24ङ्क

●●●

पन्द्रह तिथियाँ क्या कहती हैं ?

–आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज

1. दोहा– एकम को एकत्व का, करना भाई ध्यान।
इसके द्वारा ही विशद, होता है कल्याण।।
छन्द– 'एकम्' का हैं संदेशा नहीं, कोई तेरे जैसा।
तुझमें स्वयं प्रकाश भरा, अतिशयकारी दिव्य खरा।।

2. दोहा– तन चेतन से भिन्न है, यह तेरे दो रूप।
'दूज' तुझे बतला रही, तेरा तुझे स्वरूप।।
छन्द– तन चेतन में रहता है, चुपके–चुपके कहता है।
यह स्वतंत्र पक्षी जैसा, रहता पिजड़े में जैसा।।

3. दोहा– मिथ्या दर्शन ज्ञान गुरु, मिथ्या चारित तीन।
'तृतीया' कहती तीन में, रहता क्यों तू लीन।।
छन्द– मिथ्यामति तेरी कैसी, उल्लू की वृत्ती जैसी।
विषयों में क्यों फूल रहा, स्वयं आपको भूल रहा।।

4. दोहा– चउ कषाय करती सदा, चेतन गुण का घात।
क्रोध, मान, मायाचारी, लोभ की वृत्ति है भारी।।
छन्द– चार कषाएँ कसती हैं, चेतन गुण को नसती हैं।
तिथि 'चतुर्थी' कह रही, कर दो इनको मात।।

5. दोहा– हिंसादि पन पाप का, करना भाई नाश।
चेतन गुण का हो सके, तब ही पूर्ण विकाश।।
छन्द– पापों ने घेरा डाला, दुर्गति का करने वाला।
पंचव्रतों को पाया न, निज आत्म को ध्याया न।।

6. दोहा– 'षष्ठी' को छह द्रव्य से, भरा हुआ है लोक।
स्वयं आपके ज्ञान से, भेदाभेद विलोक।।
छन्द– जीवादि छह द्रव्य कहीं, नित्य अविस्थित भिन्न रहीं।
तू सुख का है कोष अहा, चिन्मय चेतनवान रहा।।

7. दोहा– 'सप्त' तत्व का सप्तमी, देती है उपदेश।
श्रद्धा करना भाव से, मिले स्वयं का देश।।
छन्द– जीवादी सुतत्वों पर, करुणा करना सत्वों पर।
मिल जाए भव कूल तुझे, इस जीवन का मूल तुझे।।

8. दोहा– आठ तुम्हारे मूलगुण, सिद्धों के भी आठ।
पढ़ा रही हैं अष्टमी, श्रावक तुझको पाठ।।
छन्द– आठ कर्म का नाश करो, मेरा कुछ विश्वास करो।
'अष्टम' पृथ्वी पाओगे, सुख अनंत पा जाओगे।।

9. दोहा– 'नव' पदार्थ को जानकर, करना तुम श्रद्धान।
नो कषाय नो कर्म का, नौमी को कर ज्ञान।।
छन्द– नो कर्मों को साथ लिया, फिर चेतन का घात किया।
भाव कर्म की माया है, तीन लोक भरमाया है।।

10. दोहा– 'दसवीं' ने आकर दिया, दस धर्मों का राज।
धर्म प्राप्त करके बने, संतों के सरताज।।
छन्द– दसवीं से यह जाना है, दश धर्मों को पाना है।
धर्म जहाँ में उत्तम हैं, बन जाते पुरुषोत्तम हैं।।

11. दोहा– 'ग्यारहवीं' आकर कहे, श्रावक जन से बात।
ग्यारह सीढ़ी धर्म की, तेरा देगी साथ।।
छन्द– ग्यारह प्रतिमा को पाओ, उत्तम श्रावक हो जाओ।
श्रावक से फिर संत बनो, कर्म नाश भगवंत बनो।।

12. दोहा– 'द्वादश' के दिन खासकर, सिद्ध शिला को पाय।
द्वादश व्रत को धारकर, द्वादश भावन भाय।।
छन्द– बारह भावना भाना है, सम्यक्ज्ञान जगाना है।
रत्नत्रय को पाकर के, मोक्ष महल को पाना हैं।।

13. दोहा– 'त्रयोदशी' तुमसे कहे, तेरह करण सम्हार।
चरण प्राप्त करके विशद, हो जाओ भव पार।।
छन्द– पंच महाव्रत पाएंगे, शील सुधर्म जगाएँगे।
चारित पालन करके, शुभ मुक्ति वधु को पाएँगे।।

14. दोहा– 'चतुदर्शी' कहती चढ़ो, चौदह गुणस्थान।
अनुक्रम से पा जाओगे भाई केवलज्ञान।।
छन्द– चौदह जीव समासों में, हर प्राणी की श्वांसों में।
भाव छुपा हैं शांति का, कोई मंगल क्रांति का।।

15. दोहा– आन पूर्णिमा कह रही, करना नहीं प्रमाद।
जागृत करना ज्ञान शुभ, जैसे पूरा चाँद।।
छन्द– 'पन्द्रह' दिन का पक्ष कहा, एक कृष्ण एक शुक्ल रहा।
कृष्ण पक्ष कहता सबसे, नींद में सोये हो सकते।।

• • •

श्रावक प्रतिक्रमण

समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभभावना।
आर्तरौद्र परित्यागः, तद्धि प्रतिक्रमणं मतम्।।

सब जीवों पर साम्यभाव धारण करके शुभ भावनापूर्वक संयम पालते हुए, आर्त–रौद्र का त्याग प्रतिक्रमण कहलाता है।

हे जिनेन्द्र ! हे देवाधिदेव ! हे वीतरागी सर्वज्ञ हितोपदेशी अरिहन्त प्रभु ! मैं पापों के प्रक्षालन के लिए, पापों से मुक्त होने के लिए, आत्म उत्थान के लिए, आत्म जागरण के लिए प्रतिक्रमण करता हूँ। (इस प्रकार प्रतिज्ञा करके एक आसन से बैठकर प्रतिक्रमण प्रारम्भ करें।)

पापी, दुरात्मा, जड़बुद्धि, मायावी, लोभी और राग–द्वेष से मलिन चित्तवाले मैंने जो दुष्कर्म किया है, उसे हे तीन लोक के अधिपति ! हे जिनेन्द्र देव ! निरन्तर समीचीन मार्ग पर चलने की इच्छा करने वाला मैं आज आपके पादमूल में निन्दापूर्वक उसका त्याग करता हूँ।

हाय ! मैंने शरीर से दुष्ट कार्य किया है, हाय ! मैंने मन से दुष्ट विचार किया है, हाय ! मैंने मुख से दुष्ट वचन बोला है। उसके लिए मैं पश्चात्ताप करता हुआ भीतर ही भीतर जल रहा हूँ।

निन्दा और गर्हा से युक्त होकर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावपूर्वक किये गये अपराधों की शुद्धि के लिए मैं मन, वचन और काय से प्रतिक्रमण करता हूँ।

समस्त संसारी जीवों की सर्व योनियाँ (जातियाँ) चौरासी लाख हैं एवं सर्व संसारी जीवों के सर्व कुल एक सौ साढ़े निन्यानवे (199॥) लाख करोड़ होते हैं, इनमें उपस्थित जीवों की विराधना की हो एवं इनके प्रति होने वाले राग–द्वेष से जो पाप लगे हों। **तस्स मिच्छा मे दुक्कडं** (तत्सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो)।

जो एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय तथा पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीव हैं, इनका जो उत्तापन, परितापन, विराधन और उपघात किया हो, कराया हो और करने वाले की अनुमोदना की है – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त जीवों में से किसी भी जीव की विराधना की हो – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

एकांत, विपरीत, संशय, वैनयिक और अज्ञान – इन पांच प्रकार के मिथ्यामार्ग और उनके सेवकों की मन–वचन से प्रशंसा की हो– **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

जिनदर्शन, जलगालन, रात्रिभोजन त्याग, पाँच उदुम्बर त्याग, मद्य त्याग, मांस त्याग मधु त्याग और जीवदया पालन – इन आठ श्रावक के मूलगुणों में अतिचार के द्वारा जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे भगवान ! मूलगुणों के अन्तर्गत जिनदर्शन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अविनय से दर्शन किया हो तथा दर्शन या पूजन करते समय मन, वचन, काय की शुद्धि नहीं रखी हो। जिनदर्शन व्रत पालन करते हुए जिनमार्ग में शंका की हो, शुभाचरण पालन कर संसार–सुख की वाञ्छा की हो, धर्मात्माओं के मलिन शरीर को देखकर ग्लानि की हो मिथ्यामार्ग और उसके सेवन करने वालों की मन से प्रशंसा की हो तथा मिथ्यामार्ग की वचन से स्तुति की हो, इत्यादि अतिचार अनाचार दोनों लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे नाथ ! मूलगुणों के अन्तर्गत जलगालन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, जल छानने के 48 मिनट बाद उसे फिर नहीं छानकर उसका उपयोग किया हो, प्रमाण से छोटे, इकहरे, मलिन, जीर्ण एवं सछिद्र वस्त्र से जल छाना

हो। गर्म पानी की मर्यादा समाप्त हो जाने पर उसका उपयोग किया हो, छानने से शेष बचे जल को और जीवानी को यथास्थान (कड़े वाली बाल्टी से कुओं में) न पहुँचाया हो उसे नाली आदि में डाल दिया हो तथा जीवानी की सुरक्षा में या पानी छानने की विधि में प्रमाद किया हो इत्यादि अनाचार मुझे लगे हों –**तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे देवाधिदेव ! मूलगुणों के अन्तर्गत रात्रि भोजन त्याग व्रत में रात्रि के बने भोजन का, सूर्योदय से 48 मिनट के भीतर या सूर्यास्त के एक मुहूर्त पूर्व तथा औषधि के निमित्त रात्रि को रस, फल आदि का सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार–अनाचार दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत पंच–उदुम्बर फल त्याग व्रत में सूखे अथवा औषधि निमित्त उदुम्बर फलों का, सर्व साधारण वनस्पति का, अदरक–मूली आदि अनन्तकायिक वनस्पति का, त्रस जीवों के आश्रयभूत वनस्पति का, बिना फाड़ किये सेमफली आदि एवं अनजाने फलों का सेवन किया हो, कराया हो या करने वालों की अनुमोदना की हो, इत्यादि अतिचार–अनाचार दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे दया के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत मद्य त्याग व्रत में मर्यादा के बाहर का अचार, मुरब्बा आदि सर्व प्रकार के सन्धानों का, दो दिन व दो रात्रि व्यतीत हुए दही, छाछ एवं काँजी आदि आसवों एवं अर्कों का तथा भांग, नागफेन, धतूरा, पोस्त का छिलका, चरस और गांजा आदि नशीले पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या सेवन करने वालों की अनुमोदना की हो तथा अन्य और भी जो अतिचार–अनाचार जन्य दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत मांस त्याग व्रत में चमड़े के बेल्ट, पर्स, जूता–चप्पल, घड़ी का पट्टा आदि का स्पर्श हो गया हो या चमड़े से आच्छादित अथवा स्पर्शित हींग, घी, तेल एवं जल आदि का, अशोधित भोजन का, जिसमें त्रस जीवों का संदेह हो ऐसे भोजन का, बिना छना हुआ अथवा विधिपूर्वक दुहरे छन्ने (वस्त्र) से नहीं छाना गया घी, दूध, तेल एवं जल आदि का, सड़े और घुने हुए अनाज आदि का, शोधनविधि से अनभिज्ञ साधर्मी या शोधन–विधि से अपरिचित विधर्मी के हाथ से तैयार हुए भोजन का, बासा भोजन का, रात्रि में बने भोजन का, चलित रस पदार्थों का, बिना दो फाड़ किये काजू, पुरानी मूंगफली, सेमफली एवं भिंडी आदि का और अमर्यादित दूध, दही तथा छाछ आदि पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य जो भी अतिचार–अनाचार दोष लगे हों– **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे परमपिता परमात्मा ! मूलगुणों के अन्तर्गत मधुत्याग व्रत में औषधि के निमित्त मधु का, फूलों के रसों का एवं गुलकन्द आदि का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो, करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार–अनाचार दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

हे नित्य निरंजन देव ! मूलगुणों के अन्तर्गत जीवदया व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अज्ञान रखा हो, उपेक्षा की हो, बिना प्रयोजन जीवों को सताया हो तथा अंगोपांग छेदन किये हों, कराये हों या अनुमोदना की हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

जुआ, मांस, मदिरा, शिकार, वेश्यागमन, चोरी और परस्त्री सेवन– इन सप्तव्यसन सेवन में जो पाप लगा हो – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

देव दर्शन–पूजन, साधु उपासना–वैयावृत्ति, स्वाध्याय, संयम पालन, इच्छायें सीमित करना और अर्जित संपत्ति का सदुपयोग (दान देना) इन षडावश्यक पालन में अतिचारपूर्वक जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

इष्टवियोग, अनिष्ट संयोग, पीड़ा चिंतन और निदान – ये चार आर्तध्यान। हिंसानंद, मृषानंद, चौर्यानंद और परिग्रहानंद – ये चार रौद्रध्यान द्वारा जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

राजकथा, चोरकथा, स्त्रीकथा और भोजनकथा करने से जो पाप लगे हों– **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

जीवों को सताने वाला दुष्ट मन, दुष्ट वचन और दुष्ट काय – ये तीन दण्ड, माया, मिथ्या और निदान तीन शल्य और शब्द गारव, ऋद्धि गारव और सात गारव द्वारा जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग – इन पाँच आस्रवों द्वारा जो पाप बन्ध हुआ हो – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

आहार, भय, मैथुन और परिग्रह – इन चार संज्ञाओं के द्वारा जो पाप बन्ध हुआ हो – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

इहलोकभय, परलोकभय, मरणभय, वेदनाभय, अगुप्तिभय, अरक्षाभय (अत्राणभय) और अकस्मात् सप्त भयों के द्वारा जो पापबन्ध हुआ हो– **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।** (नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

स्थूल हिंसा विरति व्रत का पालन करते हुए जीवों को मारा हो, बांधा हो, अंगोपांग छेदे हों, अधिक बोझ लादा हो एवं अन्नपान का निरोध किया हो, इत्यादि अनेक दोष कृत–कारित–अनुमोदना से किये हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

स्थूल असत्य विरति व्रत का पालन करते हुए मिथ्योपदेश देने से, एकान्त में कही हुई बात को प्रगट कर देने से, झूठा लेख लिखने से तथा किसी भी चेष्टा से अभिप्राय समझ कर भेद प्रकट कर देने से एवं पर का धन अपहरण करने से जो दोष मन–वचन–काय एवं कृत–कारित–अनुमोदना से लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

स्थूल चौर्य विरति व्रत के पालन करने में चोर द्वारा चुराया हुआ द्रव्य ग्रहण किया हो, राज्य के विरुद्ध कार्य किया हो, धरोहर हरण करने के भाव किये हों, तौलने के बाँट कमती या बढ़ती रखे हों और अधिक कीमती वस्तु में अल्प कीमती वस्तु मिलाकर बेची हो एवं मन, वचन, काय एवं कृत–कारित–अनुमोदना से, चोरी का प्रयोग बतलाने से जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

स्थूल अब्रह्म विरति व्रत पालन करने में व्यभिचारिणी स्त्री के साथ आने–जाने का व्यवहार रखा हो, कुमारी, विधवा एवं सधवा आदि अपरिगृहीत स्त्रियों के साथ आने–जाने या लेन–देन का व्यवहार रखा हो, काम सेवन के अंगों को छोड़कर दूसरे अंगों से कुचेष्टाएँ की हों, काम के तीव्र वेग से वीभत्स विचार बने हों और मन, वचन, काय और कृत–कारित–अनुमोदना से अन्य के पुत्र–पुत्रियों का विवाह किया हो, इस प्रकार जो भी दोष लगे हों– **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

स्थूल परिग्रह–परिमाण व्रत में मन, वचन, काय एवं कृत–कारित–अनुमोदना से जमीन और मकान आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, गाय, बैल आदि धन, अनाज आदि धान्य, दासी–दास, चांदी–सोना, वस्त्र एवं बर्तन आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्ड विरति व्रत – ये तीन गुणव्रत और भोग परिमाण व्रत,परिभोग परिमाणव्रत, अतिथिसंविभाग व्रत, समाधि मरणव्रत, ये चार शिक्षाव्रत रूप बारह व्रतों में जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

पाँच इन्द्रियों और मन को वश में न करने से जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

मोह के वशीभूत होकर अनेक प्रकार के उत्तमोत्तम् वस्त्र एवं स्त्रियों को आकर्षित करने वाला शरीर का शृंगार किया हो, राग के उद्रेक से युक्त हँसी में अशिष्ट वचनों का प्रयोग किया हो और परस्पर प्रीति से रहने वालों के बीच में द्वेष किया हो, तज्जन्य जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

तप और स्वाध्याय से हीन असम्बद्ध प्रलाप करने में, अन्यथा पढ़ने–पढ़ाने से एवं अन्यथा ग्रहण (सुनने) करने से जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका की किसी भी प्रकार से निन्दा की हो,कराई हो,सुनी हो,सुनाई हो इससे जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

साधुओं वा साधर्मियों से कटु वचन बोला हो एवं आहार दान देने में प्रमाद करने से जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

देव–शास्त्र–गुरु की अविनय एवं आसादना से जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

पाश्चात्य वेशभूषा का उपयोग कर, टी.वी. आदि देखकर एवं उपन्यास आदि पढ़कर शील में जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

उच्च कुलों को गर्हित कुल बनाने में कृत–कारित–अनुमोदना से सहयोग देने में जो पाप लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

चलने–फिरने, शरीर को हिलने–हिलाने, उठने–बैठाने, छींकने–खांसने, सोने, जम्हाई लेने और मार्ग चलने–चलाने में देखे, बिना देखे तथा जाने–अनजाने में जो दोष लगे हों – **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

किसी भी जीव को मैंने दबा दिया हो, कुचल दिया हो, घुमा दिया हो, भयभीत कर दिया हो, त्रास दिया हो, वेदना पहुँचाई हो, छेदन-भेदन कर दिया हो अथवा अन्य किसी प्रकार से भी कष्ट पहुँचाया हो- **तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ं।**

जाने-अनजाने में और जो दोष लगे हों **- तस्स मिच्छा मे दुक्कड़।**

हा दुट्ठकयं हा दुट्ठचिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं।
अन्तो अन्तो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो।।

हाय-हाय! मैंने दुष्टकर्म किए, मैंने दुष्ट कर्मों का बार-बार चिन्तवन किया, मैंने दुष्ट मर्म-भेदक वचन कहे- इस प्रकार मन, वचन और काय की दुष्टता से मैंने अत्यन्त कुत्सित कर्म किये। उन कर्मों का अब मुझे पश्चात्ताप है।

हे प्रभु ! मेरा किसी भी जीव के प्रति राग नहीं है, द्वेष नहीं है, बैर नहीं है तथा क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं है, अपितु सर्व जीवों के प्रति उत्तम क्षमा है।

हे प्रभु ! जब तक मोक्षपद की प्राप्ति न हो तब तक भव-भव में मुझे शास्त्रों के पठन-पाठन का अभ्यास, जिनेन्द्र पूजा, निरन्तर श्रेष्ठ पुरुषों की संगति,सच्चरित्र सम्पन्न पुरुषों के गुणों की चर्चा, दूसरों के दोष कहने में मौन, सभी प्राणियों के प्रति मैत्री और हितकारी वचन एवं आत्मकल्याण की भावना (प्रतीति) ये सब वस्तुएँ प्राप्त होती रहें।

हे जिनेन्द्र देव ! मुझे जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो, तब तक आपके चरण मेरे हृदय में और मेरा हृदय आपके चरणों में लीन रहे।

हे भगवन् ! मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, शुभगति हो, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनेन्द्र के गुणों की प्राप्ति हो – ऐसी मेरी भावना है, मेरी भावना है, ऐसी मेरी भावना है।

इत्याशीर्वादः (इसके बाद क्षमा वन्दना बोलें)

क्षमा वंदना

क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा शांति का दाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।
क्षमा करता सकल जन को, क्षमा करना सभी मुझको।
अभी छद्मस्थ हूँ मैं भी, नहीं है ज्ञान कुछ मुझको।
रहे मैत्री सभी जन से, किसी से बैर न मेरा।
हृदय में भावना मेरी, किसी से हो नहीं फेरा।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा ही जग का त्राता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।
पाप का कर सकें छेदन, रहे यह भाव में वेदन।
क्षमा उनसे भी चाहूँगा, मेरे हाथों हुए भेदन।
त्याग दूँ दोष इस जग के, यही है भावना मेरी।
पटे खाई हृदय की जो, बनी हो पूर्व से तेरी।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा समता को लाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।
दया मय भाव हो जावें, हृदय करुणा से भर जावे।
रहे भावों में शीतलता, कभी भी क्रोध न आवे।
क्षमा की तरणी बह जावे, सदा मैं भाव करता हूँ।
क्षमा भूषण है तन मन का, उसे मैं आप धरता हूँ।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा उर में समाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी,'विशद' मुक्ति को पाता है।
कभी जाने या अनजाने, हुए हों दोष जो मेरे।
क्षमा हमको सभी करना, बड़े उपकार हों तेरे।
वीर का धर्म ये कहता, हृदय में शांति तुम धरना।
क्षमा धारण 'विशद' दिल में कि अर्पण प्राण तुम करना।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा को धर्म गाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी,'विशद' मुक्ति को पाता है।

।। इति समाप्तम् ।।